श्री

नवतत्त्व प्रकरण मूल.

तथा

तेनो गुर्जरभाषामां बालावबोध.

ए द्वयांगने

स्वबुद्ध्यनुसार लक्षपूर्वक शुद्ध करावीने

सर्व

जिनधर्मावलंबी सुजनोने भणवा

तथा

धारण करवाने अर्थें

खीमजी भीमसिंह माणकें.

श्री मुंबापुरीमध्यें.

निर्णयसागर प्रेसमां छपाव्युं छे.

आवृत्ति त्रीजी.

संवत् १९४९ वैशाक शुद्ध १ सोमवासरे सन १८९२.

अथानुक्रमणिका प्रारंभः

दोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसंपराय, य
थाख्यात, देशविरति, तथा अविरति. ए सात प्र
कारना हिंसादिक अशुज परिणामथी निवृत्ति त
था व्यवहारथी क्रियानिरोधरूप चारित्रमांनुं गमे
ते एक अथवा अधिक चारित्र जेमां होय, तथा (त
वो के०) तप बे प्रकारनुं कह्युं छे, तेमां एक द्रव्यथी,
एना बार नेद छे. तेनां नाम, निर्जरातत्त्वमां कहे
वाशे. बीजुं इच्छानिरोधरूपनावथी एमांनुं गमे ते
एक अथवा अधिक तप जेमां होय (तहा के०)
तेमज (वीरिअं के०) करण तथा लब्धिरूप अथ
वा बल पराक्रमरूप, ए बे प्रकारना वीर्यमांनुं गमे ते
एक अथवा वधारे जेमां होय तथा (उवउंगो के०)
उपयोग ते पांच ज्ञान, त्रण अज्ञान, तथा चार द
र्शन, ए बार प्रकारना साकार तथा निराकाररूप
उपयोगमांनो गमे ते एक अथवा वधारे उपयोग
जेमां होय, तेने संसारी अथवा सिद्ध जीव कहियें.
ए गुण, जीव विना बीजा कोइमां होय नहीं. (ए
के०) ए प्रकारें (जीअस्स के०) जीवनुं (लक्खण

के०) लक्षण जाणवुं. आ गाथामां बीजा बे चकार छे, ते पादपूर्णार्थे तथा उभयान्वयी अव्यय छे॥ ५॥

हवे पर्याप्ता जीवोनुं वर्णन करतां प्रथम छ पर्याप्तिनुं स्वरूप दर्शावे छेः—आर्यावृत्तं ॥

आहार सरीर इंदिय, पज्जत्ती आण पाण भासमणे ॥ चउ पंच पंच छप्पि अ, इग विगलासन्नि सन्नीणं ॥ ६ ॥

अर्थः— पुद्गलना उपचयथी थयो जे पुद्गल परिणमन हेतुशक्तिविशेष, तेने पर्याप्ति कहे छे. एना बे भेद छेः—एक लब्धिपर्याप्ति अने बीजी करणपर्याप्ति. जे कर्मना उदयथी आरंभेली स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करी नथी, पण करशे, तेने लब्धिपर्याप्ति कहे छे. अने जेणें स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करी लीधी, तेने करणपर्याप्ति कहे छे.

अपर्याप्ति पण बे प्रकारनी छेः— एक लब्धि [illegible]प्ति, [illegible] आरं[illegible]र्याप्ति. आरंभेली स्वयो[illegible]पर्याप्ति, एतेने लब्धि अपर्याप्ति

कहे छे. अने जे स्वयोग्य पर्याप्ति सर्व पूरी करशे, पण हजी कीधी नथी, तेने करणअपर्याप्ति कहे छे.

वैक्रियशरीरने एक शरीरपर्याप्ति अंतर्मुहूर्त्त नी होय छे, ने बाकीनी पांच एक समयनी जाणवी. अने औदारिकशरीरने आहारपर्याप्ति एक समयनी होय छे, ने बाकीनी पांच, अंतर्मुहूर्त्तनी जाणवी. उत्पत्तिसमयनेविषे ए सर्व पर्याप्ति सर्वजीवो यथायोग्यरीतें साथें आरंभे छे, पण पूरी अनुक्रमें करे छे, एटलुं विशेष समजवुं.

ते पर्याप्ति छ प्रकारें छे. हरेक जीवने नवांतरना उत्पत्ति समयें जे शक्तिवडे आहार लईने तेने रसपणे परिणमाववानो जे शक्तिविशेष, तेने (आहार के०) आहारपर्याप्ति कहे छे. पछी ते रसरूपपरिणामने रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, तथा वीर्य, ए सात धातुपणे परिणमावीने शरीर बांधवानो [illegible] विशेष, तेने (सरीर [illegible] शरीरपर्याप्ति [illegible] विक[illegible] कहे [illegible] णमाव्यो जे रस, [illegible], [illegible] ड्रिय, [illegible] [illegible]

तेने तेटलां इंड्रियपणे परिणमाववानी जे शक्ति विशेष, तेने (इंदिय के०) इंड्रियपर्याप्ति कहे ठे. (पज्जत्ती के०) पर्याप्ति ए शब्द, सर्वनी साथें जोडवो. केम के? कहेली त्रण पर्याप्ति पूरी कस्या विना कोई जीव मरण पामे नहीं, माटें पर्याप्तिशब्द वचमां कह्यो ठे. ए त्रण पर्याप्ति बांधीने पठी श्वासोह्वासयोग्य वर्गणानां दलिक लई, श्वासोह्वासपणे परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, तेने (आणपाण के०) श्वासोह्वासपर्याप्ति कहे ठे. नाषायोग्य पुजल लई, नाषापणे परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, तेने (नास के०) नाषापर्याप्ति कहे ठे. अने मनोवर्गणायोग्य पुजल लई, मनपणे परिणमावीने अवलंबी मूकवानी जे शक्तिविशेष, तेने (मणे के०) मनःपर्याप्ति कहे ठे. एवी रीतें ए [illegible] पर्याप्ति कही [illegible] ठे:

[illegible] पर्याप्ति, [illegible] पर्याप्ति, इंड्रियपर्याप्ति, श्वासो[illegible]पर्याप्ति, [illegible] चार

पर्याप्ति, (इग के०) एकेंड्रियने होय. कहेली चार पर्याप्तियोनी साथें पांचमी भाषापर्याप्ति जोडीने (पंच के०) पांच पर्याप्ति, ते (विगला के०) त्रि कलेंड्रिय एटले बेंड्रिय, तेंड्रिय, तथा चउरिंड्रियने प्रत्येकें होय. एज (पंच के०) पांच पर्याप्तियो (असन्नि के०) असंज्ञी पंचेंड्रियने होय. अने (छप्पिश्र के०) छ ए पर्याप्तियो (सन्नीणं के०) संज्ञी पंचेंड्रियने होय ॥ इति ॥ ६ ॥

अहींयां जे पंचेंड्रियनी अपेक्षायें न्यून इंड्रिय होय, तेने विकलेंड्रिय कहियें. आ ठेकाणें कोइ एवी आशंका करे, के एकेंड्रिय पण पंचेंड्रियनी अपेक्षायें न्यून छे, तो तेने केम विकलेंड्रिय कहेता नथी? तो त्यां तेने उत्तर कहे छे. के त्रस अने स्थावर जीव छे, तेमां स्थावर व्यापक सकल लोक छे. अने विकलेंड्रियनो सद्भाव तिर्यग्लोकमां छे, तेमाटें [illegible] विकलें[illegible] कहेवाय छे. [illegible] हेतुमाटें एकेंड्रियने विक[illegible]ीण न[illegible] क[illegible].

[illegible] कोइ [illegible]छे, [illegible]ड्रिय, [illegible] [illegible]

मां शो फेर छे? तेने उत्तर कहे छे. के जे प्राण छे, ते शरीरसंबंधी नवोपग्राही आत्मसंबंध छे, अने पर्याप्ति ते परिणमन निवर्त्तन लक्षण छे. जेम दुग्धमध्ये श्वेतता अने स्नेहता बेहु छे, तेम जाणवुं.

वळी कोइ पूछे जे तमें प्रथम आहारपर्याप्ति कहो छो, अने पछी शरीरपर्याप्ति कहो छो, तो शरीर विना आहार केम लेवाय? तेने उत्तर कहे छे:-जे कार्मण अने तैजस ए बे शरीर तथा आयुलक्षण, एक प्राण, ए परनव जातां जीवने सहचारी छे, तेमाटे ते शरीरने बळें आहार पर्याप्ति प्रथम कहिने पछी औदारिक अथवा वैक्रि [illegible]रणीय शरीर करीने शरीरपर्याप्ति करे.

प्रसंगें प्राप्त थयेला पांच इंद्रियोना त्रेवीश विषय कहे छेः-हळवो, नारी, सुंवाळो, खरखरो, [illegible]वो, चोपड्यो, टाढो, ऊनो. ए आठ विषय स्प[र्श]ेंद्रियज जाणे. [illegible] छे, इंद्रियो जाणे. [illegible] [illegible] [illegible]र्याप्ति. [illegible], खाटो, मीठो. पां[illegible] [illegible]पर्याप्ति, एतेर्[illegible] पण बीजी चार

इंद्रियो न जाणे. सुरभिगंध, दुरभिगंध, ए बे वि षय, घ्राणेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो न जाणे. कालो, नीलो, रातो, पीलो, धोलो. ए पांच विषय, चक्षुरिंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो न जाणे. जीवशब्द, अजीवशब्द, मिश्रशब्द, ए त्रण विषय, श्रोत्रेंद्रियज जाणे, पण बीजी चार इंद्रियो जाणे नहीं. ए पांचे इंद्रियोना विषय एकठा करतां त्रेवीश थाय. तेनुं जाणपणुं मनसहित जीवें, ते जे इंद्रियमां जले, ते इंद्रिय पोताना विषयने जाणे, पण जीवना व्यापार विना इंद्रियो सर्व जड रूप छे, माटें विषयने न जाणे.

हवे जे प्राण धारण करे, तेने जीव कहियें. तिहां द्रव्यप्राण दश छे, माटें दश प्राणनुं वर्णन करे छे.

पणिंदिअ त्ति बलू सा, साउ दस पा
ण चउ छ सग [illegible] ॥ इग दु ति चउ
रिंदीणं, असंनि [illegible] [illegible] ॥७॥

अर्थः—स्पर्श कोइ [illegible], [illegible] डिय, [illegible] [illegible] चक्षु

रिंद्रिय, तथा श्रोत्रेंद्रिय, ए (पणिंदिश्र के०) पांच इंद्रिय; मनोबल, वचनबल, तथा कायबल, ए (तिबल के०) त्रण बल; (ऊसास के०) श्वासोछ्वास अने (आउ के०) आयुष्य एटले जे जीवने जवनी साथें नियतबंधक होय, ते ए (दस पाण के०) दश प्राण जाणवां.

कया कया जीवने केटलां केटलां प्राण होय? ते कहे छेः—पृथिव्यादिक पांच स्थावररूप(इग के०) एकेंद्रियने, एक स्पर्शनेंद्रिय, बीजुं श्वासोछ्वास, त्रीजुं कायबल, चोथुं आयुखुं, ए (चउ के०) चार प्राण होय. दक्षिणावर्त्त शंख प्रमुख (छु के०) बेंद्रियने उपर कहेलां चार प्राणनी साथें रसनेंद्रिय तथा वचनबल जोड्याथी (छ के०) छ प्राण होय. कानखजूरा, मांकड, जू, कीडी तथा मकोडा प्रमुख, (ति के०) तेंद्रियने उपर कहेलां छ प्राणनी साथें घ्राणेंद्रिय जोड्याथी (सग के०) सात प्राण होय; वींछी तथा भ्र मरियादि (चउरिंदीणं के०) चतुरिंद्रियने उ

पर कहेलां सात प्राणनी साथें चक्षुरिंद्रिय जो ड्याथी (अठ के०) आठ प्राण होय. माता पिताना संयोग विना एटले गर्भ विना मनुष्यना मल मूत्रादि चौद स्थानकथी उपजनारा जे संमूर्छिम मनुष्य, तथा कादव प्रमुखने विषे उपजनारा जे संमूर्छिम तिर्यंच एवा (असन्नि के०) असंज्ञी संमूर्छिम पंचेंद्रियने उपर कहेलां आठ प्राणनी साथें श्रोत्रेंद्रिय जोड्याथी (नव के०) नव प्राण होय. एमां एटलुं विशेष समजवानुं छे के, संमूर्छिम बे प्रकारना होय छे, एक संमूर्छिम मनुष्य अने बीजा संमूर्छिम तिर्यंच, ते उमां संमूर्छिम तिर्यंचने तो कहेलां नव प्राण होय छे, एवो नियम छे. पण संमूर्छिम मनुष्यने वचनबल नहिं होवाने लीधे आठज प्राण होय छे. तेमां पण जो श्वासोछ्वास पर्याप्ति बांधतो छतो मरण पामे, तो सातज प्राण रहे छे. अने जे माता पिताना संयोगें करी गर्भने विषे उत्पन्न थाय छे, एवा मनुष्य, तथा तिर्यंच, जे गर्भज जा

तिना होय, तथा नारकी कुंनीमां उपजे छे, अने देवता उत्पादशय्यामां उपजे छे, पण माता पिताना संयोगें गर्नमां उपजता नथी, तो पण देवता अने नारकीने संज्ञी पंचेंद्रिय कहियें, एवा (सन्नीण के०) संज्ञी पंचेंद्रियने उपर कहेलां नव प्राणनी सार्थे मनोबल जोड्याथी (दस के०) दश प्राण होय छे. ए सर्व, द्रव्यप्राण जाणवां, अने नावप्राण तो आत्माना ज्ञानादि गुण छे, ते जाणवा ॥ ७ ॥

॥ इति श्री जीवतत्त्ववर्णनं समासम् ॥ १ ॥

हवे अजीवतत्त्वनुं वर्णन करतां प्रथम अजीव तत्त्वना चौद नेद कहे छेः—

धम्माऽधम्माऽगासा, तिय तिय नेया तहेव अद्धा य ॥ खंधा देस पएसा, परमाणु अजीव चउदसहा ॥८॥

अर्थः— (धम्मा के०) धर्मास्तिकाय, (अधम्मा के०) अधर्मास्तिकाय, (आगासा के०) आ

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

॥ अथ ॥

॥ श्रीबालावबोधसहितं नवतत्त्वप्रकरणं ॥

॥ प्रारभ्यते ॥

श्रीवीरजिनं नत्वा, मत्वा तद्दिष्टनावचक्रं च ॥
नवतत्त्वार्थविवरणं, कुर्वेऽहं बालबोधाय ॥ १ ॥

हवे प्रथम, नवतत्त्वनां नाम कहे छे.

आर्यावृत्तं.

जीवाऽजीवा पुण्णं, पावाऽसव संवरो
य निज्जरणा ॥ बंधो मुक्खो य तहा,
नव तत्ता हुंति नायवा ॥ १ ॥

अर्थः—व्यवहार नयें करी जे शुनाशुन कर्मो नो कर्त्ता, हर्त्ता, तथा नोक्ता होय अने निश्चयनयें करी ज्ञान, दर्शन, तथा चारित्ररूप निजगुणोनोज कर्त्ता तथा नोक्ता होय अथवा डुःख सुख ज्ञानो

पयोगलक्षणवंत चेतना सहित होय; तथा प्राण धारण करे, तेने प्रथम (जीवा के०) जीवतत्त्व कहियें; तेथी विपरीत जे चेतनारहित जडस्वनाव वालो होय, तेने बीजुं (अजीवा के०) अजीव तत्त्व कहियें. जेणें करी शुन कर्मना पुजलोनो संचय थवाथी सुखनो अनुनव थाय ठे, तेने त्रीजुं (पुसं के०) पुण्यतत्त्व कहियें; तेथी विपरीत जेणें करी अशुन कर्मना पुजलोनो संचय थवाथी डुःख नो अनुनव थाय ठे, तेने चोथुं (पावा के०) पापतत्त्व कहियें; जेणें करी नवां कर्म बंधाय ठे, अशुन कर्मोपादानहेतु हिंसादिक, तेने पांचमुं (आसव के०) आश्रवतत्त्व कहियें; जेणें करी आवतां कर्म रोकाय, अर्थात् पांच समिति, अने त्रण गुप्ति, तेणें करी जे आश्रवनो रोध करवो, तेने ठहुं (संवरो के०) संवरतत्त्व कहियें; जेणें करी आत्मप्रदेशमांथी देशथकी कर्म जूदां थाय ठे. अथवा पूर्वें करेलां कर्मोनो जे क्षय थाय ठे, एटले तप प्रमुखें करी कर्मनुं पचाववुं थाय ठे, तेने सातमुं

(निज्जरणा के०) निर्जरातत्त्व कहियें, तथा पांच कर्मोनुं ग्रहण करीने तेनी साथें जीवनुं बंधन क्षीर नीरनी पेठें मली जवुं थाय, तेने आठमुं (बंध के०) बंधतत्त्व कहियें; अने जे आत्मप्रदेशथ की सर्वथा कर्मोनो क्षय थाय, तेने नवमुं (मुक्को के०) मोक्षतत्त्व कहियें; ए नवतत्त्वरूप वस्तुनुं यथास्थित स्वरूप जे प्रमाणें सिद्धांतोमां देखो कह्युं छे, (तहा के०) तेमज सम्यग्दृष्टि जीवोने, ए (नवतत्ता के०) नवतत्त्वो ते ज्ञ परिज्ञायें करी (नायव्वा के०) जाणवा योग्य (हुंति के०) छे. अने केटलांएक प्रत्याख्यान परिज्ञायें करी छांडवा योग्य छे. मूलमां बे ठेकाणें जे यकार वापर्यो छे, ते चकारवाचक होवाथी वनयान्वयी अव्यय समजी लेवो. अने ते चकारथी ए नवतत्त्वने विषे सर्व पदार्थोनो समावेश थाय छे, अर्थात् एथी वधारे तत्त्व कोई नथी, एवी सूचना करी छे ॥१॥

ए नवतत्त्वमांहेला जीव अने अजीव, ए बे तत्त्व, मात्र जाणवा योग्य छे. पुण्य, संवर, निर्ज्जरा अ

पयागल [illegible] ए चार त[illegible] ग्रहण करवा योग्य छे, परंतु धार[illegible]नु पुण्यतत्त्व जे छे, ते व्यवहार नयें करी श्रावको हि[illegible]ग्रहण करवुं योग्य छे, अने निश्चयनयवडे त्याग वा[illegible]वुं योग्य छे. तेमज मुनिने उत्सर्गें त्याग कर [illegible] योग्य छे, अने अपवादें ग्रहण करवुं योग्य छे. तथा पाप, आश्रव अने बंध. ए त्रण तत्त्व तो स[illegible] सर्वने त्याग करवा योग्यज छे ॥ उक्तं च ॥ हेयाबंधाऽसव पा, वा जीवाऽजीव हुंति वि न्नेया ॥ संवर निज्जर मुक्खो, पुंसं हुंति उवाएए॥ १ ॥

ए नव तत्त्वनां नाम कह्यां. अन्यथा संक्षेप थी तो जीव अने अजीव, ए बे तत्त्वज श्रीग णांगमांहे कह्यां छे, ते केम? के जीवने पुण्य तथा पापनो संजव छे तथा कर्मनो बंध पण तादा त्मिक छे अने कर्म जे छे, ते पुजलपरिणाम छे अने पुजल ते अजीव छे, तथा आश्रव जे छे, ते पण मिथ्यादर्शनादिरूप उपाधियें करी जीवनो मलीन स्वजाव छे, ए पण आत्माना प्र देश अने पुजल विना बीजो कोइ नथी, तथा सं

वर जे छे, ते पण आश्रव निरोधलक्षण सर्वनेदें आत्मानो निवृत्तिरूप स्वनाव परिणाम ज्ञानात्मक छे. तथा निर्जरा जे छे, ते पण जीव अने कर्मने पृथक् उपजाववाने कारणें दधिमथ नमंथान न्यायें करी कर्मनो परिशाट छे. तथा सर्वशक्तियें करी सकलकर्म दुःखनो क्षय नवनीत गत दुग्धजल निर्मल घृतप्रगटनरूप दृष्टांतें चिदानंदमय आत्मानुं प्रगट थावुं, ते मोक्षतत्त्व छे, तेमाटें जीव अने अजीव, ए बे तत्त्वज कहियें.

तथा अन्यत्र मतांतरें सात तत्त्व पण छे, केम के? पुण्य अने पाप, ए बे तत्त्वनो अंतर्नाव, बंध तत्त्वमांहेज थाय छे, कारण के जे शुनप्रकृतिकर्म बंध, ते पुण्य तत्त्व, अने जे अशुनप्रकृतिकर्मबंध, ते पापतत्त्व छे, माटें पुण्य पाप रहित सात तत्त्व कहियें. तेमज वली पांच तत्त्व पण कह्यां छे. इत्यादिक घणो विस्तार, विशेषावश्यक तथा तत्त्वार्थ अने लोकप्रकाशादि ग्रंथोथकी जाणवो.

हवे प्रत्येक तत्त्वना जुदा जुदा नेद कहे छे.

चउदस चउदस बाया, लीसा बासी
अहुंति बायाला ॥ सत्तावन्नं बारस,
चउ नव नेआ कमेणेसिं ॥ २ ॥

अर्थः—प्रथम जीव तत्त्वना (चउदस के०) चौद, बीजा अजीव तत्त्वना (चउदस के०) चौद, त्रीजा पुण्यतत्त्वना (बायालीसा के०) बहेंतालीश, चोथा पापतत्त्वना (बासी के०) व्याशी, पांचमा आश्रव तत्त्वना (बायाला के०) बहेंतालीश, बठा संवर तत्त्वना (सत्तावन्नं के०) सत्तावन्न, सातमा निर्जरातत्त्वना (बारस के०) बार, आठमा बंधतत्त्वना (चउ के०) चार अने नवमा मोक्ष तत्त्वना (नव के०) नव, एवी रीतें (कमेणेसिं के०) ए क्रमें करी (नेआ के०) नेदो (हुंति के०) थाय छे.

उपर कहेलां नवे तत्त्वोना सर्व नेदनी संख्या बशो ने बोंतेर थाय छे. तेउमां अठ्याशी नेद, अरूपी छे, अने एक शो ने अठ्याशी नेद, रूपी छे ॥ उ

कं च ॥ धम्माऽधम्माऽगासा, तिय तिय अद्धा अ जीव दसगा य ॥ सत्तावन्नं संवर, निज्जर डुदस मुत्ति नवगा य ॥ १ ॥ अठासि अरूवि हवइ, संपइ नणामि चेअ रूवीणं ॥ पमाणुदेस पएसा, खंध चउ अजीव रूवीणं ॥२॥ जीवे दस चउ डु चउ, बासी बायाल हुंति चत्तारी ॥ सय अठासी रूवी, डु सय छस्सत्त नव तत्ते ॥ ३ ॥ एमां पहेली गाथावडे अठ्यासी नेद अरूपी कह्या, अने पाछली बे गाथा वडे एक शो अठ्यासी नेद, रूपी कह्या छे. इति॥ २॥

एटले संवर, निर्जरा अने मोक्ष, ए त्रण तत्त्व, आत्माना सहज स्वनावपणा माटे अरूपी छे. तथा जीव, पुण्य, पाप, आश्रव अने बंध, ए पांच तत्त्व, आठ कर्मना नेदमांहे अंतर्नावें छे, ते माटें रूपी जाणवां. यद्यपि जीव अरूपी छे, तथापि जीव, नेदें करी कर्म सहित संसारीपणा माटें तेने इहां रूपीमां गण्यो छे, तथा अजीव तत्त्व मांहेला पुजल द्रव्यना चार नेद रूपी अने धर्मास्ति कायादिक चार द्रव्यना दश नेद अरूपी छे.

ए नवे तत्त्वना रूपी अरूपी भेदोनी संख्या नो तथा हेयज्ञेयादिनो यंत्र नीचें प्रमाणें छे.

अंक	नाम.	रूपिभेद.	अरूपिभेद.	हेयज्ञेयादि.
१	जीव.	१४	०	ज्ञेय.
२	अजीव.	४	१०	ज्ञेय.
३	पुण्य.	४२	०	उपादेय.
४	पाप.	८२	०	हेय.
५	आश्रव.	४२	०	हेय.
६	संवर.	०	५७	उपादेय.
७	निर्ज्जरा.	०	१२	उपादेय.
८	बंध.	४	०	हेय.
९	मोक्ष.	०	९	उपादेय.

हवे प्रथम जीव तत्त्वनो विचार कहेतो थको आ गाथामांजीवनी जाणवा योग्य छजातियो देखाडे छे.

एगविह दुविह तिविहा, चउव्विहा पं
च छव्विहा जीवा ॥ चेयण तस इय
रेहिं, वेय गई करण काएहिं ॥ ३ ॥

अर्थः—(एगविह के०) एकविध, (डुविह के०) द्विविध, (तिविहा के०) त्रिविधा, (चउविहा के०) चतुर्विधा, (पंच के०) पंचविध, (छविहा के०) षड्विधा, एटले छ प्रकारें (जीवा के०) जीवतत्त्व छे. तेमां सर्व जीवने श्रुतज्ञाननो अनंतमो नाग उघाडो रहेवाथी तेउ (चेयण के०) सचेतन एटले चेतनालक्षणवान् छे, माटें एक विध जाणवुं. (तस के०) त्रस एटले जे चलन शक्तिमान् होय, तडकाथी छायायें आवे अने छायाथी तडकामां आवे तथा नय देखी त्रास पामे, तेने त्रस कहियें. अने (इयरेहिं के०) इतर ते बीजा स्थावर एटले जे स्थिरतावान् होय. एम सर्व जीव द्विविध जाणवा. (वेय के०) वेद त्रण, ते स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुंसकवेद. एम सर्व जीव त्रिविध जाणवा. (गई के०) गति चार, देवता, मनुष्य, नारकी अने तिर्यंच, एम सर्व जीव चतुर्विध जाणवा. (करण के०) इंड्रिय पांच. एकेंड्रिय, बेंड्रिय, तेंड्रिय, चौरिंड्रिय अने पंचिंड्रिय. एम स

वे जीव पंचविध जाणवा. अने (काएहिं के०) काय छः—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वाउकाय, वनस्पतिकाय, अने त्रसकाय. एम सर्व जीव षड्विध जाणवा ॥ इति ॥ ३ ॥

इहां कोइ प्रश्न करे, के प्रथम नव तत्त्वोना भेदोनी संख्यामां जीवतत्त्वना जे चउद भेद कह्या छे, तेउमां ए छ जातिनो समावेश थाय छे, के जाति अने भेदनी कांहिं जुदी व्यवस्था छे? तेनो उत्तरः—यद्यपि ते चउद भेद पण चउद जातिना जीवनी पद्धति जुदी होवाथी पहेलां चउद प्रकारनी भेद एवी संज्ञा करी छे, अने आ तो, छ प्रकारनी जाति एवी संज्ञा कह्यामां आवी छे ॥ इति॥

हवे जीवतत्त्वना चउद भेद कहे छे.

एगिंदिय सुहुमियरा, सन्नीयर पणिं
दिआ य स बि ति चउ॥ अपजत्ता
पज्जत्ता,क्कमेण चउदस जियठाणा॥४॥

अर्थः—(एगिंदिय के०) एकेंद्रियना बे भेद छे, ए

क (सुहुम के०) सूक्ष्म, बीजो (इयरा के०) इतर एटले बादर. पांचे स्थावरने एकेंद्रिय कहे छे. तिहां जे चौदराजलोकमां व्यापी रह्या छे, पर्वत प्रमुखने भेदीने जाय आवे, कोई वस्तुथी भेदाय नहीं, ने छेदाय पण नहीं; अग्नि जेने बाळी शके नहिं, चर्मदृष्टियें देखाय नहिं, मनुष्यादिक कोई प्राणीना उपयोगमां आवे नहिं, एवा अदृश्य अने निरतिशयी सूक्ष्मनाम कर्मोदयवंतने सूक्ष्म कहे छे. जे नियतस्थानवर्ती छे, परंतु कोइ वस्तुने भेदी शके नहीं, पण जेनो भेद तथा छेद बीजी वस्तुथी थई शके, जेने अग्नि बाळी शके, चर्मदृष्टिनो विषय थइ शके, जे मनुष्यादिक सर्व प्राणीयोना उपयोगमां आवे, एवा दृश्य अने सातिशयी बादरनाम कर्मोदयवंतने बादर कहे छे. अने (पणिंदिआ के०) पंचेंद्रियना बे भेद छे, एक (सन्नि के०) संज्ञी, बीजो (इयर के०) इतर एटले असंज्ञी. इहां श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, घ्राण, जिह्वा, तथा नेत्र. ए पांच इंद्रियो जेने होय, तेने पंचेंद्रिय

कहे ठे. तेमां जे मन संज्ञा सहित होय, तेने सं ज्ञी कहे ठे अने जे मन संज्ञा रहित होय, तेने अ संज्ञी कहे ठे. एवं चार भेद थया. तेने (बि के०) बेंड्रिय, (ति के०) तेंड्रिय, (चउ के०) चउरिंड्रिय; ए प्रत्येकनो एक एक भेद कह्यो ठे. तेणें करी (स के०) सहित करियें, तेवारें सात भेद थाय.

एवी रीतें एकेंड्रियना बे भेद, बेंड्रियनो एक भेद, तेंड्रियनो एक भेद, चउरिंड्रियनो एक भेद, तथा पंचेंड्रियना बे भेद, मळीने सात भेद थया. ए साते भेदना जीवो बे प्रकारें होय ठेः—एक (अ पजत्ता के०) अपर्याप्ता तथा बीजा (पज्जत्ता के०) पर्याप्ता, तेमां जेने जेटली पर्याप्ति कही ठे, ते पूरी कीधी न होय, अने मरण पामे, तेने अपर्याप्ता क हे ठे. तथा जेने जेटली पर्याप्ति कही ठे, ते पूरी की धी होय, अने पठी मरण पामे, तेने पर्याप्ता कहे ठे.

पूर्वें कहेला सात भेदना अपर्याप्ता अने सात भेदना पर्याप्ता, ए बे प्रकार होवाथी (कमेण के०) उक्त क्रमें करी (चउदस के०) चौद (जियठा

ण के०) जीवनां स्थान छे. ए रीतें सर्व संसारी जीवो विषे चौद नेद जाणी लेवा. यद्यपि शास्त्रांतरमां वली जीवना बीजा पण घणा नेद कह्या छे. परंतु सर्व औपाधिक छे. स्वानाविक नेद तो एकज चेतनालक्षण छे. मूलमां (य के०) चकार छे, ते उनयान्वयी अव्यय छे.

वली प्रकारांतरें सर्व संसारी जीवना बत्रीश नेद पण थाय छे, ते कहे छे ॥ गाथा ॥ पण थावर सुहुमियरा, परित्तवण सन्नि असन्नि विगल तिगं ॥ इय सोलस पज्जत्ता, अपजत्ता जीव बत्तीसं ॥ १ ॥ (पणथावरसुहुमं के०) पांच सूक्ष्म स्थावर, तथा (इयरा के०) पांच इतर एटले बादर स्थावर, ए दश नेद, (परित्तवण के०) प्रत्येक वनस्पतिनो अग्यारमो नेद, (सन्नि के०) संज्ञी पंचेंद्रियनो बारमो नेद, (असन्नि के०) असंज्ञी पंचेंद्रियनो तेरमो नेद, (विगलतिगं के०) विकलत्रिक एटले बेंडिय, तेंडिय, तथा चउरिंडियना त्रण नेद मलीने शोल नेद थाय छे, (इय

सोलस के०) ए शोळ नेदोना जीव बे प्रकारना छे. एक (पज्जत्ता के०) पर्याप्ता, बीजा (अपजत्ता के०) अपर्याप्ता मळीने (जीव के०) जीवना (बत्तीसं के०) बत्रीश नेद थाय छे.

शास्त्रांतरमां सर्व संसारी जीवोना पांच शें ने त्रेशठ नेद पण कह्या छे. तेमां मनुष्योना त्रण शें ने त्रण नेद थाय छे, ते आवी रीतें:—पांच महाविदेह क्षेत्र, पांच नरतक्षेत्र, तथा पांच अरवतक्षेत्र, मळीने पंदर कर्म नूमिक्षेत्र छे. तेमज त्रीश अकर्मनूमि युगलियानां क्षेत्र छे, अने छप्पन अंतर्द्वीप छे. ए सर्व मळीने पर्याप्ताना एक शो ने एक नेद, अपर्याप्ताना एकशो ने एक नेद, तथा संमूर्छिम अपर्याप्ताना एक शो ने एक नेद, मळीने त्रण शो ने त्रण नेद थाय.

देवताउना एकशो ने अठाणुं नेद थाय छे, ते आवी रीतें:— दश नुवनपति, शोळ व्यंतर, पंदर परमाधामी, दश तिर्यग्जृंनक, पांच चर ज्योतिषी, पांच स्थिरज्योतिषी, नव लोकांतिक,

त्रण किल्बिषिया, बार देवलोकना, नव ग्रैवेयकना, तथा पांच अणुत्तर विमानना, मळीने नवाणुं पर्याप्ता तथा नवाणुं अपर्याप्ता गणतां एक शो ने अठाणुं भेद थाय.

नारकीना जे सात भेद कह्या छे, तेना पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता, ए बे प्रकार करतां चौद भेद थाय.

तिर्यंचना अडतालीश भेद छे, ते आवी रीतें:— पांच सूक्ष्मस्थावर, पांच बादरस्थावर, त्रण विकलेंद्रिय अने एक प्रत्येक वनस्पति, मळिने चौद पर्याप्ताना तथा चौद अदर्याप्ताना गणतां अठ्यावीश भेद थाय. अने जलचर, स्थलचर, खेचर, उरःपरिसर्प, तथा भुजपरिसर्प, ए पांच संमूर्छिम तथा गर्भज मळीने दश थाय, तेना पर्याप्ता तथा अपर्याप्ता ए बे प्रकार करतां वीश भेद थाय. तथा पूर्वना अठ्यावीश अने ए वीश मळीने अडतालीश भेद थया.

एवी रीतें मनुष्यना त्रण शो ने त्रण भेद, देवताना एक शो ने अठाणुं भेद, नारकीना चौद भे

द, अने तिर्यंचना अडतालीश भेद, ए सर्व मली पांच शो ने त्रेशठ भेद थया ॥ इति ॥ ४ ॥

हवे जीवनुं लक्षण कहे छे.

अनुष्टुब् वृत्तं ॥ नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥ वीरियं उवउगो अ, एअं जीअस्स लख्कणं॥५॥

अर्थः— (नाणं के०) ज्ञान ते मतिज्ञान, श्रुत ज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान तथा केवलज्ञान, ए पांच ज्ञान सम्यक्त्व आश्रयीने कह्यां छे. एमी साथें मति अज्ञान, श्रुतअज्ञान तथा विभंगज्ञान, ए त्रण अज्ञान मिथ्यात्वाश्रयी छे, ते लेतां आठनी संख्या थाय छे. एउमांनुं गमे ते एक, अथवा अधिक ज्ञान जेमां होय; (च के०) पुनः वली (दंसणं के०) दर्शन ते चक्षु, अचक्षु, अवधि, तथा केवल, ए चार प्रकारना दर्शनमांनुं गमे ते एक अथवा अधिक दर्शन जेमां होय, (चेव के०) निश्चें (चरित्तं के०) चारित्र ते सामायिक, छे

काशास्तिकाय, ए त्रण द्रव्यना खंध, देश तथा प्रदेश. एवा (तियतियभेया के०) त्रण त्रण भेद होवाथी प्रत्येक अस्तिकायने त्रणें गुणतां नवनी संख्या थाय छे. प्रदेशना समूहने अस्तिकाय कहे छे. एवो अर्थ, कहेलां त्रणे द्रव्योने लागु करवो. ए त्रणे द्रव्योनो चौद रज्ज्वात्मक खंध कहेवाय छे. तेथी कांइक उंछो होय, अथवा सकल प्रदेशानुगत सामान्यपरिणामनी परें अवयवधर्मास्तिकायना जेह बुद्धिपरिकल्पितादयादि प्रदेशात्मक जे विभाग, तेने देश कहियें, अने जे प्रकृष्ट देश अतिनिर्विभाज्य अविभाज्य होय, ते प्रदेश कहेवाय छे. (तहेव के०) तेमज (अद्धा के०) कालद्रव्यनो वर्त्तमान समयरूप एकज प्रदेश होवाथी ते अस्तिकाय कहेवाय नहीं, माटें ए एकज भेद जाणवो. एम दश भेद थया. (य के०) चकार उभयान्वयी अव्यय छे. एथी पुद्गलास्तिकाय द्रव्य लेवुं, तेना अखंड द्रव्यरूप आखा पदार्थने अथवा अनंतादि परिमाणुना म

वेला समूहने (खंधा के०) खंध कहे छे. खं धनो केटलो एक नाग जेनो खंधनी साथें संबंध होय, तेने (देस के०) देश कहे छे. जेनी खं धनी साथें निर्विनाज्य कल्पना करी छतां खं धनी साथें अनिन्न संबंध होय, तेने (पएसा के०) प्रदेश कहे छे. अने तेज प्रदेश जो खं धथी निन्न थाय, एवो निर्विनाज्यनाग एटले जेना केवलीनी बुद्धियें एक नागना बे नाग थई शके नहीं, तेने (परमाणु के०) परमाणु कहे छे. ए रीतें ए पुजलास्तिकाय द्रव्यना चार नेद,ते पूर्वोक्त दश नेदो साथें मेलवतां (अजीव के०) अ जीवतत्त्वना (चउदसहा के०) चौद नेद थाय॥८॥

अजीव तत्त्वना पांच मूल नेद, तथा तेनां लक्षण, बे गाथायें करी कहे छेः–

धम्माऽधम्मा पुग्गल, नह कालो
पंच हुंति अजीवा ॥ चलण सहावो
धम्मो,थिरसंगाणो अहम्मो अ॥९॥

अवगाहो आगासं, पुग्गल जीवाण
पुग्गला चउहा ॥ खंधा देस पएसा,
परमाणुं चेव नायवा ॥ १० ॥

अर्थः– (धम्मा के०) धर्मास्तिकाय, (अध म्मा के०) अधर्मास्तिकाय, (पुग्गल के०) पुग लास्तिकाय, (नह के०) आकाशास्तिकाय, अने (कालो के०) काल,ए (पंच के०) पांच (अजी वा के०) अजीवद्रव्य (हुंति के०) छे. ए पांचनी साथें जीवद्रव्य नेल्याथी षड्द्रव्य कहेवाय छे.

जेम मत्स्यना संचारनुं अपेक्षाकारण पाणी छे, तेम जीवने तथा पुद्गलने गतिपणे परिणमतां जे अपेक्षाकारण होय, तेने धर्मास्तिकाय कहे छे. जेम जलविना मत्स्यनो संचार थइ शके नहीं, तेम धर्मास्तिकाय विना जीव अने पुद्गल चाली शके नहीं. अर्थात् (चलणसहावोधम्मो के०) चलनस्वनावगुण, ते धर्मास्तिकाय जाणवो.

जेम पंथीने विशामो लेवानेविषे वृक्षादिकनी

छाया अपेक्षाकारण छे, तेम जीव तथा पुद्ग लने स्थितिपणे परिणमतां जे अपेक्षा कारण होय, अर्थात् जे (थिरसंगणो अहम्मो के०) स्थिर राखवानो जे सहज गुण, तेने अधर्मास्तिकाय कहे छे. ए बन्ने अरूपी द्रव्य चउदराजलोक व्यापी छे. वर्ण, गंध, शब्द, रूप, स्पर्श, तथा रस रहित असंख्यातप्रदेशी छे, जे उदासीन वृत्ति होय तेने अपेक्षाकारण कहे छे. (अ के०) चकार, पादपूर्णार्थे उभयान्वयी अव्यय छे ॥९॥

जे लोकालोकव्यापी शब्द, रूप, रस, गंध, तथा स्पर्श रहित अरूपी अनंतप्रदेशी अने सा कर ने दूधनी पठें जेनो (अवगाहो के०) अवकाश स्वभाव गुण तेने (आगासं के०) अकाशास्तिकाय कहियें. अर्थात् एक प्रदेशथी बीजा प्रदेशमां जतां जे अवकाशने आपे, तेने आकाशद्रव्य कहियें. तेना बे भेद छे, एक लोकाकाश, बीजो अलोका काश, ए विशेषता छे. आंहीं कोइ प्रश्न करे के अव काश कोने आपे छे? तो त्यां तेने उत्तर आपे छे,

के (पुग्गलजीवाण के०) पुद्गल तथा जीवने अव काश आपे ले. ते (पुग्गला के०) पुद्गलद्रव्य (चउद्दा के०) चार प्रकारें ले. पूर्वोक्त स्वरूप पुद्गलद्रव्यना (खंधा के०) खंध, (देस के०) देश, (पएसा के०) प्रदेश, तथा (परमाणुं के०) परमाणु, ए नेद (चेव के०) निश्चयें करीने (नायव्वा के०) बुद्धिमानोनें जाणवा योग्य ले॥ १०॥

हवे पुद्गलद्रव्यनुं औपाधिक लक्षण कहे ले:-

अनुष्टुब् वृत्तं ॥ सद्दंधयार उज्जोअ,
पन्ना ळाया तवेहि आ॥ वस्त्र गंध रसा
फासा, पुग्गलाणं तु लक्कणं ॥११॥

अर्थः– सचित्त, अचित्त अने मिश्र, ए त्रण प्रकारमांना गमे ते प्रकारनो (सद्द के०) शब्द, (अंधयार के०) अंधकार, तथा रत्नप्रमुखनो (उज्जोअ के०) प्रकाश, तथा चंद्रमा प्रमुखनी (पन्ना के०) ज्योति, तथा (ळाया के०) ळाया अने (तवेहि के०) सूर्य प्रमुखनो आतप, (आ के०) वा,

एटले बीजा नीचला पदार्थ पण जाणवा. (वस्तु के०) वर्ण, (गंध के०) गंध, (रसा के०) रस, (फासा के०) स्पर्श, एवा गुणवालो होय अने जे चौद राजलोकमां व्यापक, संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी, तथा अनंतप्रदेशीनो पूर्ण, गलन स्वजाववान् एवो अखंड पुजलास्तिकायरूप खंध, ते खंधनो एक जाग अथवा कांहिं पण न्यून जागरूपदेश, तथा जे केवलीनी बुद्धियें पण एक जागना बे जाग थइ शके नहीं,एवो अतिसूक्ष्म खंधनो अजिन्नजाग निर्विजाज्यरूप ते प्रदेश, ते नीज ज्यारें खंधथी जिन्न कल्पना थाय, त्यारें ते परमाणु कहेवाय छे. ए (पुग्गलाणं के०) पुजलोनुं (तु के०) निश्चयपणे (लरकणं के०) लक्षण छे ॥११॥

हवे कालद्रव्यना जेद दर्शावे छे ॥ आर्यावृत्तं ॥

एगाकोडि सतसठि, लरका सत्तहुत्त
री सहस्सा य ॥ दोयसया सोलहि
या, आवलिआ इग मुहुत्तम्मि ॥१२॥

अर्थः—(एगाकोडि के०) एक क्रोड, (सत्तसट्ठि लक्खा के०) सडसठ लाख, (सत्तहुत्तरीसहस्सा के०) सत्योतेर हजार, (दोयसया के०) बसें अने (सोलहिया के०) शोल उपर, एटली (आवलिआ के०) आवलिका (इगमुहुत्तम्मि के०) एक मुहूर्त्तमां थाय छे. (य के०) चकार पादपूर्णार्थे उभयान्वयी अव्यय छे. हवे एनो भावार्थ कहे छेः—आंखना एक स्फुरणमां अथवा एक चपटी वजाडवामां अथवा जीर्ण वस्त्र फाडवानी वखतें एक तंतुथी बीजे तंतुयें जाय तथा कमलना पांदडाना समूहने युवान पुरुषें भालाथी वींधतां ते भालुं जेटला वखतमां एक पांदडाथी बीजे पांदडे पहोंचे, तेटला वखतमां असंख्याता समय थइ जाय, एटले वस्त्र अथवा पत्र फाडवाना आरंभमां सूक्ष्मात् सूक्ष्म क्षणरूप जे काल होय छे, जेनो विभाग थइ शके नहीं. जेनो भूत अने भविष्य विषे विचार थाय नहीं. एटले वस्त्र अथवा पत्र फाडतां प्रथम वर्त्तमान कालरूप अतिसूक्ष्म का

लनुं उल्लंघन थइने ते क्यारें नूत काल थयो? कयो वर्त्तमान काल छे? अने कयो नविष्य काल थवा योग्य छे? तेनुं अनुमान थइ शके नहिं, तेने सर्व लघुकालरूप समय कहे छे. एवा असंख्यात सम यने आवली कहे छे. एवी बशों ने छप्पन आवली यें एक कुल्लक नव थाय छे. ए करतां बीजा कोइ पण नाना नवनी कल्पना थइ शके नहिं. एवा कांहिंक अधिक सत्तर कुल्लक नवमां एक श्वासो श्वासरूप प्राणनी उत्पत्ति होय छे. एवा सात प्राणोत्पत्ति कालने एक स्तोक कहे छे. एवा सात स्तोकसमयें एक लव होय छे. एवा सत्त्योतेर लवें बे घडीरूप एक मुहूर्त्त होय छे. ते एक मुहूर्त्तने विषे पूर्वोक्त १६७७७२१६ आवली होय छे ॥ १२॥

हवे व्यवहार कालना प्रकार कहे छे.

समयावली मुहुत्ता, दीहा पक्खा य

मास वरिसा य ॥ नणिउ पलिआ

सागर,उस्सप्पिणीसप्पिणी कालो॥१३॥

अर्थः—अतिसूक्ष्मकालने (समय के०) समय कहे छे, असंख्याता समयने एक (आवली के०) आवली कहे छे, एवी (१६७७७२१६) आवलीयें (मुहुत्ता के०) एक मुहूर्त्त थाय छे, त्रीश मुहूर्त्तें (दीहा के०) एक अहोरात्रिरूप दिवस थाय छे, पंदर अहोरात्रियें (पक्खा के०) पखवाडियुं थाय छे. बे पखवाडीये (मास के०) एक महिनो थाय छे. बार महिने (वरिसा के०) एक वर्ष थाय छे. ए रीतें (भणिउ के०) कह्युं छे, तेमज असंख्याता वर्षें एक (पलिआ के०) पल्योपम थाय, तेवा दश कोडाकोडी पल्योपमें (सागर के०) सागरोपम थाय, तेवा दश कोडाकोडी सागरोपमें (उस्सप्पिणी के०) उत्सर्प्पिणी अने बीजा दश कोडाकोडी सागरोपमें (सप्पिणी के०) अवसर्प्पिणी थाय. ए बे मलीने वीश कोडाकोडी सागरोपमें (कालो के०) एक कालचक्र थाय. एवा अनंता कालचक्रें एक पुद्गलपरावर्त्तन थाय. ए सर्व मनुष्य लोकमां व्यवहारथी काल जाणवो.

आ गाथामां बे ठेकाणें चकार छे, ते पादपूर्णार्थ अन्यथान्वयी छे. एनो भावार्थः—पूर्वोक्त जे कालना भेद कह्या, तेथी वली बीजा पण कालना भेद घणा छे, ते पण जाणी लेवा. जेम के? बे मासें एक ऋतु थाय छे, त्रण ऋतुयें एक अयन, बें अयनें एक वर्ष, पांच वर्षें एक युग, चोराशी लाख वर्षें एक पूर्वांग, ते एक पूर्वांगने चोराशी लाखें गुणतां एक पूर्व थाय छे. इत्यादिक कालना अनेक भेद छे, ते सर्व बीजा शास्त्रोथी जाणवा ॥ १३ ॥

॥ षड्द्रव्यनुं कांइक विशेष स्वरूप देखाडे छेः—

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एग
खित्त किरिआय ॥ णिच्चं कारण कत्ता,
सव्वगय इयर अप्पवेसे ॥ १४ ॥

अर्थः— छ द्रव्यमां जीव अने पुद्गल, ए बे द्रव्य, (परिणामि के०) परिणामी छे. बाकीनां चार द्रव्य, अपरिणामी छे. इहां परिणामनो भाव जाणवो, परंतु स्वभावें परिणामी तो छए द्रव्य

छे. छ द्रव्यमां एक जीवद्रव्य, (जीव के०) जीव छे, अने बाकी पांच द्रव्य अजीव छे, छ द्रव्यमां एक पुजलद्रव्य, (मुत्तं के०) मूर्त्तिमंत रूपी छे, बाकीनां पांच द्रव्य, अमूर्त्तिमंत अरूपी छे. छ द्रव्यमां पांच द्रव्य, (सपएसा के०) सप्रदेशी छे, अने एक कालद्रव्य, अप्रदेशी छे. छ द्रव्यमां धर्म, अधर्म अने आकाश, ए त्रण द्रव्य (एग के०) एक छे, बीजां त्रण द्रव्य अनेक छे. छ द्रव्यमां एक आकाश, (खित्त के०) क्षेत्र छे, बीजां पांच द्रव्य क्षेत्री छे. छ द्रव्यमां जीव अने पुजल ए बे द्रव्य, (किरिआय के०) सक्रिय छे, बाकीनां चार अक्रिय छे. छ द्रव्यमां धर्म, अधर्म, आकाश अने काल, ए चार द्रव्य, (णिच्चं के०) नित्य छे, बे अनित्य छे. यद्यपि उत्पाद, व्यय, अने ध्रुवपणे सर्व पदार्थ नित्यानित्यपणे परिणामे छे, तथापि धर्मादिक चार द्रव्य सदा अवस्थित, माटे नित्य कह्यां. छ द्रव्यमां धर्मादिक पांच द्रव्य, (कारण के०) कारण छे. एक जीवद्रव्य, अकारणरूप छे.

छ द्रव्यमां एक जीवद्रव्य, (कत्ता के०) कर्त्ता छे, बीजां पांच अकर्त्ता छे. छ द्रव्यमां एक आकाश, (सवगय के०) सर्वगत छे, अने (इयर के०) बीजा पांच द्रव्यमात्र, लोकव्यापी छे. माटें असर्वगत जाणवां. तथा यद्यपि छ द्रव्य क्षीरनीरपरें पर स्पर अवगाढ छे, तथापि (अप्पवेसे के०) प्रवेश रहित छे, एटले कोइ पण द्रव्य अन्यद्रव्यमां तद्रू पपणे थतुं नथी माटें प्रवेश रहित छे "सदसग नावं न विजहंति" ए वचन माटें ॥ १४ ॥

अहींयां षड्द्रव्यनुं काहिंक विशेष कहे छे. १ स्वनावथी गतिक्रिया परिणत एवा जीव, अने पुजल, ए बे द्रव्य छे. तिहां पोताना स्वनावने धारवुं, पोषवुं, तेने धर्म कहियें अने (अस्ति के०) प्रदेश तेनो (काय के०) समूह, तेने धर्मा स्तिकाय कहियें. तेमज २ गतिक्रिया परिणीत जीव तथा पुजलने अवष्टंनदानस्वनावलक्षण ते अधर्मास्तिकाय द्रव्य कहियें, तेमज ३ गति क्रियापरिणतजीव तथा पुजलने अवकाशदान

लक्षणस्थिति अंतर्गत प्रविष्ट कीलकन्याय आ
काशास्तिकाय द्रव्य जाणवुं. तथा ४ समस्त वस्तु
समुदायनुं कलन संख्यान अथवा समयावलिका
दिकें करी सचेतनाचेतन पदार्थने जेणें करी क
लियें, एटले जाणीयें, एवुं अमूर्त्त लोकव्यापि व
र्त्तनालक्षण असंख्य समयात्मक नैश्चयिक स
मयलोकव्यापी अनंत समयात्मक कालद्रव्य
जाणवुं. तथा ५ पूर्ण गलन स्वभाव, ते पुद्गल
अनंत अणुस्कंध पर्यंत जे परमाण्वादिक, ते
कोइक द्रव्यथी गले, वियोग पामे, तथा स्वभाव
थकी कोइक द्रव्यप्रत्यें पुष्टि करे, ते पुद्गलद्रव्य
कहियें, तेना जे प्रदेशनो समूह, तेने पुद्गलास्ति
काय कहियें. ए असंख्यानंतप्रदेश प्रमाण मूर्त्त
द्रव्य सकललोकव्यापि जाणवुं. तथा ६ इंद्रिया
दिक दश द्रव्य प्राण अने ज्ञानदि चतुष्कभाव
प्राणप्रत्यें धारितलक्षणें करी जीवद्रव्य छे, ते
जीव, त्रिकालस्थायी अविनाशी असंख्यप्रदेशा
त्मक जीवास्तिकाय जाणवो. ए छ द्रव्य कह्यां

एमां कालद्रव्यनुं स्वरूप कांइक विशेषें कहे छे. काल जे छे, ते मनुष्यक्षेत्रनेविषे तज्जति नाव नानाविध छे. यडुक्तं ज्योतिःकरंमकग्रंथे ॥ गाथा ॥ लोयाणु नझ्णीयं, जोइसचक्कं नणंति अरिहंता ॥ सव्वे कालविसेसा, जस्स गइविसेस निप्पन्ना ॥ १ ॥ अहींयां केटलाएक कहे छे के जीवादिक ड्रव्यने वर्त्तनादिक जे पर्याय तेहीज काल जाणवो. ते पृथग् ड्रव्यने हेतुयें केवी रीतें छे? तेनुं समाधान करे छे.

जीवड्रव्यने वर्त्तना, परिणाम, क्रिया अने परावर्त्तादिक. ए सर्व काल व्यपदेशनाक् छे, तिहां जे जीवने सादि सांतादि चार नेदें वर्त्तवुं, ते वर्त्तना जाणवी. तथा जे विश्रसाप्रयोगें जीवड्रव्यनी परिणति ते परिणाम जाणवो. तथा नूत, नावि अने नविष्यत् विशेषणवंत जीवने गमनस्थित्यादि कार्यनी चेष्टा, ते क्रिया जाणवी.

तथा पूर्वनावी पश्चाद्भावी परापर इत्यादि यदाश्रयें ड्रव्यने कहेवुं, ते परापरत्व जाणवुं. ए

प्रकारें वर्त्तनादिक सर्वद्रव्यना पर्याय छे, ते सर्व कालव्यपदेशजाक् छे, जेमाटें कथंचित्पणे द्रव्यथी अभिन्नद्रव्यनामी पर्याय पण कहियें, ते माटें पर्यायने द्रव्यपणुं करते अनवस्था प्रसंग थाय, माटे काल, ते पृथक् द्रव्य नहिं. वर्त्तनाद्यात्मक काल जीवाजीव द्रव्यपर्यायपणे मानवो. एम जो नहिं मानीयें, तो आकाशनी पेरें सर्वव्यापी कालास्तिकाय मानवो? एवो परवादीनो आशय ग्रहण करी शिष्यें पूछ्युं, तेवारें गुरु उत्तर कहे छे. के हे देवाणुप्पिय! ए आप्तवचन नहीं, केम के? सिद्धांतने विषे पांच अस्तिकाय कह्या छे, अने छठुं कालद्रव्य पृथक् कह्युं छे. जे प्रदेशनुं बहुपणुं होय, तेने अस्तिकाय कहियें, अने कालने विषे प्रदेशनुं बहुपणुं नथी, जे माटें कालने विषे मात्र वर्त्तमान एक समय प्ररूपणा छे. अने अनागत समयनी अनुपपत्ति छे. शिष्य आशंका करे छे, के काल तो अविनष्ट धर्मात्मक छे, अने अतीत समयावली मुहूर्त्तादि वर्षादि प्र

रूपणा माटें असंख्य समयात्मक कालने बहु प्रदेशपणानी प्राप्ति छे ?

उत्तरः– ए सत्य छे, परंतु स्थिर स्थूल का लत्रयवर्त्ती पदार्थनुं अंगीकारपणुं छे, अने आ वलिकादिक प्ररूपणामात्र व्यवहार नयने मतें छे, अने निश्चयनयने मतें कालने विषे प्रदेशा नाव छे, तेमाटें कालने विषे अस्तिकायपणुं क हेवुं घटमान नथी. अने गुणनो आश्रय माटे इव्यपणुं घटमान छे, "गुणाणं मासउ दव्वं" इति वचनात् तेमाटें इव्यथी वर्त्तनालक्षण अने का लथी अनादि अनंत तथा क्षेत्रथी समयक्षेत्र वर्त्ती अने नावथी रूपादि रहित अमूर्त्तिमंत अं कादिक चारे व्यंगित समयादिकें परमाणुनी परें अनुमेय एवुं कालनामा इव्य पृथक्पणे मानवुं, एहीज आप्तवाक्य प्रमाण करवुं. इत्यादिक का लइव्य संबंधी विशेष विचार, ग्रंथांतरें बहुश्रुतना मुखथी जाणी लेवो ॥ इति प्रसंगागतकाल इव्यविचारः समाप्तः ॥

हवे शिष्य पूछे छे, के नवतत्त्वादिक सकल पदार्थने विषे जीवतत्त्वनी मुख्य प्ररूपणा कही, अने द्रव्याधिकारें तो प्रथम धर्मास्तिकायनी मुख्यता कही छे, तेनुं शुं कारण?

गुरु उत्तर कहे छेः—सकल पदार्थ, जीवमिश्रित छे, ए सत्य छे, परंतु संसारस्थ जे जीवो छे, ते सर्व पुद्गलप्रतिबंधित छे, ते पुद्गलनो अधोगमनस्वभाव छे, अने जीवनो ऊर्ध्वगमन स्वभाव छे. ए रीतें जीव तथा पुद्गल ए बेहु द्रव्यने गत्यन्यथानुपपत्ति छे, माटें आद्यमां धर्मास्तिकाय द्रव्यनुं ग्रहण कीधुं छे, अने तेवार पछी जीव तथा पुद्गलने स्थित्यन्यथानुपपत्ति माटें अधर्मास्तिकायनुं ग्रहण कीधुं छे, तेवार पछी जीवाऽजीवादि पदार्थने आधाराऽन्यथानुपपत्तिमाटें आकाशास्तिकायनुं ग्रहण कीधुं छे, तेवार पछी वृक्षादिकने फलप्रदानशक्तिनी अन्यथानुपपत्ति माटें कालद्रव्यनुं ग्रहण कीधुं छे. तेवार पछी घटादि कायान्यथाऽनुपपत्ति माटें पुद्गलास्तिकायनुं

ग्रहण कीधुं छे. तेवार पछी प्रतिप्राणीने प्रत्यक्ष सिद्ध चैतन्यनी अन्यथानुपपत्ति माटें जीवास्तिकायनुं ग्रहण कीधुं छे.

आशंकाः—धर्मास्तिकायादिक चार द्रव्यना देश अने प्रदेश छे, परंतु परमाणु नथी, तो परमाणुनुं एकतुं ग्रहण कखुं, तेनुं कारण शुं ?

उत्तरः—मूलभेदें अजीवना नव भेद छे, तेमां चार अस्तिकाय द्रव्य, पांचमो खंध, छठो देश, सातमो प्रदेश अने आठमो पुद्गलनो एक परमाणु, तथा नवमुं कालद्रव्य छे. माटें ते नव भेद देखाडवा सारु परमाणु कह्यो.

आशंकाः—प्रदेश अने परमाणु ए बेहुने निर्विभागरूपपणुं छे, माटें एमां शी विशेषता छे ?

उत्तरः— जे स्कंधप्रतिबद्ध निर्विभाग भाग, ते प्रदेश, तथा जे एकाकी विकल्पित स्कंधपरिणामरहित एवा लोकने विषे छूटा वर्त्ते छे, ते तथा अचित्त महास्कंधरूप ते परमाणुआ जाणवा.

ए षड् द्रव्यनो अल्पमात्र विचार लख्यो. विस्तारें विशेषावश्यकादिक ग्रंथोथकी जाणवुं,

॥ इति श्री अजीवतत्त्वविचारः समाप्तः ॥२॥

हवे पुण्यतत्त्वनुं वर्णन करतां पुण्य नव प्रकारें बंधाय छे, अने बहेंतालीश प्रकारें जोगवाय छे, ते कहे छे.

सा उच्च गोअ मणु डुग, सुरडुग पं
चेंदि जाइ पणदेहा ॥ आइ ति तणुणु
वंगा, आइम संघयण संठाणा ॥१५॥

अर्थः— साधु प्रमुखने पहेलुं अन्न दीधाथी, बीजुं पाणी दीधाथी, त्रीजुं रहेवाने स्थान देवाथी, चोथुं सूवाने पाट प्रमुख दीधाथी, पांचमुं पहेरवा अथवा उंढवाने वस्त्र दीधाथी, छठुं ते विषे मनें करी शुजसंकल्प कस्वाथी, सातमुं वचनें करीने स्तुत्यादिक कस्वाथी, आठमुं कायायें करी सेवा कस्वाथी, तथा नवमुं हाथे करी नम

स्कारादिक करवाथी, ए नव प्रकारें पुण्य बंधाय छे. तेने बहेंतालीश प्रकारें जीव जोगवे, ते कहे छे.

१ जेना उदयें जीव, सुखनो अनुजव करे, अथवा शाताने पामे, तेने (सा के०) शाता वेदनीय कहीयें, २ जेना उदयें जीव, उच्चगोत्र एटले उच्चकुलमां जन्म धारण करीने लोकने विषें पूजा प्रतिष्ठादिकने पामे, तेने (उच्चगोअ के०) उच्चगोत्र कहियें. जेना उदयें ३ मनुष्य नी गति तथा ४ मनुष्यनी आनुपूर्वीनी प्राप्ति थाय छे, तेने (मणुडुग के०) मनुष्यद्विक कहियें. जेना उदयें ५ देवनी गति, तथा ६ देव नी आनुपूर्वीने पमाय छे, वक्रगतियें परजवमां जतां बलदने नाथ घालीने सीधो चलाववानी परें जेथी उपजवाने स्थानकें पहोंची शकाय, तेने आनुपूर्वी कहे छे. ए (सुरडुग के०) सुर द्विकरूप नामकर्म कहियें. ७ जेना उदयें पंचेंद्रि यपणुं प्राप्त थाय छे, तेने (पंचेंदिजाइ के०) पंचेंद्रिय जाति नामकर्म कहियें. जेना उदयें

पांच शरीरनी प्राप्ति थाय छे, ते कहे छेः- ७ जेथी औदारिक शरीरयोग्य पुद्गल ग्रहण करीने, तथा तेने शरीरपणे परिणमावीने जीव, पोताना प्रदेशनी सार्थे मेलवे, तेने औदारिक नाम कर्म कहे छे. एवी रीतें सर्वशरीरने विषे योजना करवी. ए वैक्रियशरीरना बे नेद छे. एक औपपातिक ते देवता तथा नारकीने होय छे. बीजो लब्धिप्रत्ययीयो ते तिर्यंच तथा मनुष्य लब्धिवंतने होय छे. १० आहारकशरीर, ते चौद पूर्वधर मुनिराज तीर्थकरनी रुद्धि प्रमुख जोवाने अर्थें एक हाथ प्रमाण देह धारण करे छे. ११ तैजसशरीर, ते आहारनुं पचन करनार तथा तेजोलेश्यानुं हेतु. १२ अने कार्मण शरीर, ते कर्मना परमाणु आत्मप्रदेशनी सार्थे मल्या छे, तेज जाणवुं. ए (पणदेहा के०) पंच शरीररूप नामकर्म कहियें. जेना उदयथी कहे लां पांच शरीरमांना (आइ के०) आदिनां औदारिक, वैक्रिय तथा आहारक, ए (तितणु के०)

त्रण शरीरना बे बाहु, बे ऊरु, एक पृष्ठिका, एक मस्तक, एक उदर, तथा एक हृदय. ए आठ अंग छे. अने अंगुलि प्रमुख उपांग छे, तथा रेषादिक अंगोपांग छे. एटले १३ औदारिक अंगोपांग, १४ वैक्रिय अंगोपांग, १५ आहारक अंगोपांग, अने तैजस शरीर, तथा कार्मण शरीर, ए बेने अंगोपांग नथी, तेथी पहेलां त्रण शरीरनांज अंगोपांग कह्यां छे. तेने (उवंगा के०) अंग उपांग, तथा अंगो पांगरूप नामकर्म कहियें. १६ जेना उदयथी छ संघयणमांनुं (आइम के०) पहेलुं वज्रऋष्भ नाराच नामनुं संघयण प्राप्त थाय छे. तिहां वज्र एटले खीली, ऋषभ एटले पाटो, तथा नाराच एटले बे पासा, मर्कटबंध एटले मर्कटबंध, ते उपर पाटो, ते उपरें खीली एवो हाडनो निचय एटले समुदाय होय, तेने (संघयण के०) अस्थि निचयसंघयणरूप कहियें. १७ जेना उदयथी पोतें पर्यंकासन करी बेठां छतां समचतुरस्त्र चारे बाजु सरखी आकृति थाय, अने पोताना अंगुल

प्रमाणवडे एकशो ने आठ अंगुल प्रमाण शरीर जराय, तेने उत्तमपुरुष कहे छे, एनी प्राप्ति थाय छे, तेने (संठाणा के०) छ संस्थानमांनुं पहेलुं समचतुरस्र संस्थान कहियें ॥ इति॥१५॥

वन्न चउक्काऽगुरु लहु, परघा ऊसास आ
यवुज्जोअं॥ सुभ खगइ निमिण तस दस,
सुर नर तिरिआउ तित्थयरं ॥ १६ ॥

अर्थः—जेना उदयथी १७ श्वेत, रक्त अने पीतरूप शुभ वर्ण; १९ एक सुरभिगंधरूप शुभ गंध; २० आम्ल, मधुर अने कषायेल रूप शुभरस; तथा २१ लघु, मृदु, उष्ण अने स्निग्धरूप शुभ स्पर्श. ए चार पदार्थ, पुण्यप्रकृतिने अर्थें प्रशस्त जाणवा. एउनी प्राप्ति थाय छे; तेने (वन्नचउक्का के०) वर्णचतुष्करूप कहियें.

२२ जेना उदयथी मध्यम वजनदार शरीरनी प्राप्ति थाय, एटले लोढानी पठें अति जारी पण नहिं अने आकडाना कपासनी पठें अति

हलको पण नहीं, किंतु मध्यमपरिणामी होय, तेने (अगुरुलहु के०) अगुरुलघु नामकर्म कहियें.

२३ जेना उदयथी बीजा बलवानने अति दुःसहनीय छतां पोतें गमे तेवा बलीयाने जीतवाने समर्थ थाय छे, एवा बलनी प्राप्ति थाय छे, तेने (परघा के०) पराघात नामकर्म कहियें.

२४ जेना उदयथी सुखपूर्वक श्वासोश्वास लइ शकाय, कोइ पण विघ्न पडे नहीं, तेने (ऊसास के०) श्वासोश्वास नामकर्म कहियें.

२५ जेना उदयथी सूर्यना बिंबनी परें परने ताप उत्पन्न करवाना हेतुरूप तेजोयुक्त शरीरनी प्राप्ति थाय छे, ते (आयव के०) आतप नामकर्म.

२६ जेना उदयथी चंद्रबिंबनी परें शीतलताने उत्पन्न करवानुं हेतुरूप तेजोयुक्त शरीर, तेनी प्राप्ति थाय, ते (उज्जोअं के०) उद्योतनामकर्म.

२७ जेना उदयथी वृषभ तथा हंसनी परें सारी चलनशक्तिनी प्राप्ति थाय छे, तेने (सुभख गइ के०) शुभविहायोगति नामकर्म कहियें.

२७ जेना उदयथी पोताना अंगना सर्व अव यवो योग्यस्थसने विषे गोठववानी शक्ति सूत्र धारनी पठें प्राप्त थाय ठे, तेने (निमिण के०) निर्माण नामकर्म कह्यिें.

३७ जेना उदयथी त्रस दशको एटले त्रसादि दश प्रकृति जे आगल कहेवाशें, तेनी प्राप्ति थाय ठे, तेने (तसदस के०) त्रसदशक नामकर्म कह्यिें. तेनुं विवरण आगलनी गाथामां कहेवाशे.

३ए जेना उदयथी देवताना आयुष्यनी प्राप्ति थाय ठे, तेने (सुर के०) सुरायुष्यरूप कह्यिें.

४० जेना उदयथी मनुष्यना आयुष्यनी प्राप्ति थाय ठे, तेने (नर के०) नरायुष्यरूप कह्यिें.

४१ जेना उदयथी तिर्यंचना आयुष्यनी प्राप्ति थाय ठे, तेने (तिरिआउ के०) तिर्यंचायु ष्यरूप कह्यिें.

४२ जेना उदयथी त्रिभुवनने विषे पूज्यपणुं प्राप्त थाय ठे, तेने (तिञ्चयरं के०) तीर्थंकर नामकर्म कह्यिें. ए कर्मनो उदय, मात्र केवलीनेज थाय ठे.

हवे पूर्वोक्त त्रसदशक कहे छेः—

तस बायर पज्जत्तं, पत्तेअ थिरं सुभं च सुभगं च ॥ सुस्सर आइज्ज जसं, तसाइदसगं इमं होइ ॥ १७ ॥

अर्थः— १ जेना उदयथी जीवने बेंद्रियना शरीरनी प्राप्ति थाय, अर्थात् एक इंद्रियनुं शरीर पामे नहीं, तेने (तस के०) त्रसनामकर्म कहियें.

२ जेना उदयथी बादरशरीरनी प्राप्ति थाय, पण जे दृष्टियें करी देखाय नहीं, एवा सूक्ष्म शरीरने न पामे, तेने (बायर के०) बादर नामकर्म.

३ जेना उदयथी आप आपणी पर्याप्ति पूरी करे, ते पर्याप्ति बे प्रकारें छे, एक लब्धि, बीजी करण. तेने (पज्जत्तं के०) पर्याप्तिनामकर्म कहियें.

४ जेना उदयथी औदारिक अथवा वैक्रिय प्रमुख भिन्न भिन्न शरीरनी प्राप्ति थाय, पण घणा जीवो वच्चें एक शरीर न पामे, तेने (पत्ते अ के०) प्रत्येक नामकर्म कहियें.

५ जेना उदयथी शरीरना दंतादिक अवय वोने स्थिरतानी प्राप्ति थाय छे, तेने (थिरं के०) स्थिरनामकर्म कहियें.

६ जेना उदयथी शरीरना सर्व अवयव सारा होय, अथवा नाभिना उपरनुं शरीर सारुं होय, तेने (सुभं के०) शुभ नामकर्म कहियें.

७ जेना उदयथी सर्वलोकने प्रिय थाय, तेने (सुभगं के०) सौभाग्य नामकर्म कहियें.

८ जेना उदयथी वाणीमां कोकिलानी प वें मधुरता थाय, तेने (सुस्सर के०) सुस्वर नामकर्म कहियें.

९ जेना उदयथी लोकनेविषे माननीय वचन थाय, तेने (आइज्ज के०) आदेय नामकर्म कहियें.

१० जेना उदयथी लोकनेविषे यशःकीर्त्ति थाय, तेने (जसं के०) यशोनामकर्म कहियें.

एवी रीतें (तसाइदसगं के०) त्रस आदि दश प्रकृतिनुं दशक, (इमं के०) ए पुण्यना भेद मां (होइ के०) छे. ते पूर्वोक्त बत्रीशमां जे

लियें, तेवारें बहेंतालीश थाय. ए पुण्यतत्त्वना बहेंतालीश नेद कह्या. आ गाथामां बे चकार जे ठे, ते पादपूर्णार्थे ठे ॥ १७ ॥

॥ इति श्री पुंण्यतत्त्वविचारः समाप्तः ॥ ३ ॥

हवे पापतत्त्वनुं वर्णन करतां अढार प्रकारें पाप बंधाय, अने व्याशी प्रकारें नोगवाय, ते कहे ठेः—

नाणंतराय दसगं, नव बीए नीअ
साय मिछत्तं ॥ थावर दस नरय
तिगं, कसाय पणवीस तिरिय डुगं॥१८॥

अर्थः—प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोन, राग, द्वेष, कलह, अन्याख्यान, पैशून्य, रति अरति, परपरिवाद, मायामोसो, तथा मिथ्यात्वशल्य. ए अढार प्रकारें पाप बंधाय ठे, अने व्याशी प्रकारें नोगवाय ठे, ते व्याशी प्रकार कहे ठेः—

१ जेना उदयथी पांच इंड्रिय, तथा मनो द्वारायें जे नियतवस्तुनुं ज्ञान थाय ठे, एवा प्र

थम मतिज्ञाननुं जे आछादन थाय, तेने मति ज्ञानावरणीय पापकर्म कहियें.

२ जेना उदयथी शास्त्रानुसारें जे ज्ञान थाय छे, एवा श्रुतज्ञाननुं आछादन थाय, तेने श्रुत ज्ञानावरणीय पापकर्म कहियें.

३ जेना उदयथी इंद्रियादिकनी अपेक्षा विना आत्मद्रव्यने जे साक्षात् रूपी द्रव्यने जाणवानुं जे ज्ञान थाय छे, एवा अवधिज्ञाननुं जे आछादन थाय, तेने अवधिज्ञानावरणीय पापकर्म कहियें.

४ जेना उदयथी संज्ञी पंचेंद्रियना मनोगत नाव जाणवानुं जे ज्ञान थाय छे, एवा मनःपर्य वज्ञाननुं जे आछादन थाय छे, तेने मनःपर्यव ज्ञानावरणीय पापकर्म कहियें.

५ जेना उदयथी पूर्वोक्त चार ज्ञान रहित जे एक लुं निरावरण ज्ञान होय, एवा केवलज्ञाननुं जे आ छादन थाय, तेने केवलज्ञानावरणीय पापकर्म क हियें. एवी रीतें पांच प्रकारना ज्ञाननें जे आछादन करे, तेने (नाण के०) ज्ञानावरणीय पापकर्म कहियें.

६ जेना उदयथी पोताना घरमां देवा योग्य वस्तु छतां, तथा दाननुं फल जाणतां छतां पण आपी शकाय नहिं, ते दानांतराय पापकर्म कहियें.

७ जेना उदयथी दातार छतां, दातारना घरमां वस्तु छतां, मागनार माह्यो छतां, पण जे याचित वस्तुनी प्राप्ति न थाय, तेने लाभांतराय पापकर्म कहियें.

८—९ जेना उदयथी पोतें यौवन छतां, सुरूप छतां, तथा भोगोपभोग्य वस्तुनी प्राप्ति थई छतां, पण ते भोगवाई न शकाय, तेने भोगांतराय तथा उपभोगांतराय, ए बे पापकर्म कहियें. ८ पुष्पादि पदार्थ जे एक वार भोगवाय छे, तेने भोग कहे छे. अने ९ वस्त्रादिक पदार्थ जे वारंवार भोगवाय छे, तेने उपभोग कहियें छैयें.

१० जेना उदयथी पोतें यौवन, रोगरहित, तथा बलवान् छतां पण जेथी पोतानी शक्ति फोरवाई शकाय नहिं, ते वीर्यांतराय पापकर्म.

एवी रीतें पांच प्रकारें जे आडुं आवे, तेने

(अंतराय के०) अंतराय नामनुं पापकर्म क हियें. पहेलां पांच तथा ए पांच मलीने (दस गं के०) दश प्रकार थया. हवे (नवबीए के०) बीजा नव प्रकार दर्शनावरणीय कर्मना जाण वा. तेमां चार नेद, दर्शनना तथा पांच नेद, निद्राना कहे ढे.(सामान्यउपयोगने दर्शन कहे ढे)

११ जेना उदयथी आंखें करी जे रूपनुं सा मान्यपणे ग्रहण थाय, एवा चक्षुर्दर्शननुं आछा दन थाय, तेने चक्षुर्दर्शनावरणीय पापकर्म कहियें.

१२ जेना उदयथी, चक्षु विना चार इंद्रिय तथा मनें करी पोत पोताना विषयनुं जे सामान्य पणे ग्रहण थाय, एवा अचक्षुर्दर्शननुं जे आछाद न थाय, तेने अचक्षुर्दर्शनावरणीय पापकर्म कहियें.

१३ जेना उदयथी सामान्यपणे जे रूपी द्रव्यनुं मर्यादापणे ग्रहण थाय ढे, एवा अवधि दर्शननुं जे आछादन थाय, तेने अवधिदर्शनाव रणीय पापकर्म कहियें.

१४ जेना उदयथी समस्त वस्तुनुं जे सामा

न्यपणे देखवुं थाय छे. एवा केवल दर्शननुं जे आ छादन थाय, ते केवलदर्शनावरणयी पापकर्म.

१५ जेना उदयथी निद्रावस्था थई गया पछी सुखपूर्वक जागृदवस्थानी प्राप्ति थाय, तेने निद्रारूप पापकर्म कहियें.

१६ जेना उदयथी निद्रावस्था थई गया पछी दुःखपूर्वक जागृदवस्थानी प्राप्ति थाय, तेने निद्रानिद्रारूप पापकर्म कहियें.

१७ जेना उदयथी बेसतां तथा ऊठतां निद्रा आव्या करे, तेने प्रचलारूप पापकर्म कहियें.

१८ जेना उदयथी हरतां फरतां पण निद्रा आवे, तेने प्रचला प्रचलारूप पापकर्म कहियें.

१९ जेना उदयथी दिवसनुं चिंतवेलुं कार्य रात्रिने विषे निद्रासमयें जागृतनी पठें थाय छे, तेने थीणद्धीरूप पापकर्म कहियें. थीणद्धीनिद्रा-ना समयें प्राणी, वासुदेवना अर्द्धबल युक्त होय छे, अने ते जीव नरकगामी जाणवो.

२० जेना उदयथी पोतें रूपवान् तथा धन

वान् छतां नीचकुलनेविषे उत्पन्न थाय छे, तेने (नीअ के०) नीचैर्गोत्ररूप पापकर्म कहियें. (ए नीच गोत्ररूप पापकर्म निंदापात्र छे.)

२१ जेना उदयथी दुःखनो अनुभव थाय छे, ते (असाय के०) अशाता वेदनीय पापकर्म.

२२ जेना उदयथी वीतरागना वचननी विपरीत सद्दहणा थाय, तेने (मिछत्तं के०) मिथ्यात्वमोहनीय पापकर्म कहियें.

३२ जेना उदयथी स्थावरदशकनी प्राप्ति थायछे, तेने(थावरदस के०) स्थावरदशक नामनुं पापकर्म ते आगल कहेवाशे,माटें आहिं नाममात्र दर्शाव्युं छे.

३५ जेना उदयथी नरकनी गति, नरकनी आनुपूर्वी, तथा नरकनुं आउखुं प्राप्त थाय छे, तेने (नरयतिगं के०) नरकत्रिक पापकर्म कहियें.

(कसायपणवीस के०) पच्चीश कषायरूप पापकर्मना पच्चीश प्रकार छे. तेउमां सामान्यथी तो एक शोल कषाय अने बीजा नव नोकषाय. एवा बे प्रकार छे. तेउनुं अनुक्रमें वर्णन करे छे.

३९ जेना उदयथी अनंत संसार बंधाय, तेने अनंतानुबंधी पापकर्म कहियें. एना क्रोध, मान, माया अने लोभ, ए चार भेद छे. ए जावज्जीव लगें कायम रहे. सम्यक्त्व आववा न दिये, अने अंतें नरकनेविषे पहोंचाडे, ए क्रोध, पर्वतनी लींटी जेवो छे. मान, पाषाणना थांभला जेवुं छे, माया, वंशना मूल जेवी छे. अने लोभ, कृमीना रंग जेवो छे.

४३ जेना उदयथी थोडा प्रत्याख्याननी पण प्राप्ति न थाय, तेनें अप्रत्याख्यानीय पापकर्म कहियें. एना क्रोध, मान, माया अने लोभ, ए चार भेद छे. ए एक वर्ष सुधी कायम रहे छे, देशविरतिपणुं आववा दिये नहीं, ने अंतें तिर्यंचनी गतिनी प्राप्ति करावे. ए क्रोध, सुकेला तलावनी रेषा जेवो छे. मान, हाडकाना थांभला जेवुं छे. माया, मेंढाना शिंगडा जेवी छे. तथा लोभ, कर्दमना रंग जेवो छे.

४७ जेना उदयथी सर्वविरतिरूप प्रत्याख्याननुं आछादन थाय, तेने प्रत्याख्यानीय पापकर्म

कहियें. एना क्रोध, मान, माया अने लोभ,ए चार भेद छे. ए चार मास सुधी कायम रहे. सर्वविर तिरूप चारित्रनो घात करे, तथा अंतें मनुष्यनी ग तिनी प्राप्ति करावे छे. ए क्रोध रेतीनी रेखा जेवो छे. मान, काष्ठना थांभला जेवुं छे. माया, वृषभना मूत्र नी रेषा जेवी छे. अने लोभ, काजलना रंग जेवो छे.

५१ जेना उदयथी चारित्र धारण करनारुं थो डुंक दीपे. तेने संज्वलन पापकर्म कहियें. एना पण क्रोध, मान, माया अने लोभ. ए चार भेद छे. ए पंदर दिवस सुधी कायम रहे छे. यथाख्यात चा रित्रने आवरण करे, अने देवगतिनी प्राप्ति करा वे छे. ए क्रोध, पाणीनी रेषा जेवो छे. मान, ने तरना थांभला जेवुं छे. माया, वंशनी छोल जेवी छे, अने लोभ हलदरना रंग जेवो छे.

एवी रीतें चार चार भेदें चार कषाय कहेतां शोल कषायनुं वर्णन कर्युं. हवे नव नोकषाय क हे छे. जे कषायने सहचारी होय, ते नोकषाय.

५७ जेना उदयथी एक वस्तुनिमित्तें तथा

बीजी परनिमित्तें, ए बे प्रकारथी हास्य, रति, अरति, शोक, नय, तथा डुगंढानी उत्पत्ति थाय, तेने हास्यषट्करूप पापकर्म कहियें. एवं सत्तावन्न.

५७ जेना उदयथी स्त्री नोगववानी इछा थाय, तेने पुरुषवेदरूप पापकर्म कहियें, एने तृणना अग्निनी उपमा छे. ५९ जेना उदयथी पुरुष नोगववानी इछा थाय तेने स्त्रीवेदरूप पापकर्म कहियें; एने धुणीना अग्निनी उपमा छे. ६० जेना उदयथी स्त्री तथा पुरुष, ए बन्नेने नोगववानी अनिलाषा थाय, तेने नपुंसक वेदरूपपाप कर्म कहियें, एने नगरदाहनी उपमा छे.

६१ जेना उदयथी तिर्यंचनी गति तथा तिर्यंचनी आनुपूर्वीनी प्राप्ति थाय, तेने (तिरियडुगं के०) तिर्यंचद्विक नामकर्म कहियें ॥ १७ ॥

इग बि ति चउ जाईउ, कुखगइ उ
वघाय हुंति पावस्स ॥ अपसढं वस्न
चउ, अपढम संघयण संगणा ॥ १९ ॥

अर्थः— ६३ जेना उदयथी पृथ्वीकायादिक पांच स्थावरनी जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय, तेने (इग के०) एकेंद्रिय जातिरूप पापकर्म कहियें.

६४ जेना उदयथी शंखप्रमुख जीवोनी जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय छे. तेने (बि के०) बेंद्रियजातिरूप पापकर्म कहियें.

६५ जेना उदयथी जू, माकडादिक जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय छे, तेने (ति के०) तेंद्रिय जातिरूप पापकर्म कहियें.

६६ जेना उदयथी वृश्चिकादिक जातिना शरीरनी प्राप्ति थाय छे, तेने (चउजाईउ के०) चतुरिंद्रिय जाति रूप पापकर्म कहियें.

६७ जेना उदयथी उंट अथवा गधेडानी पर्वे नरशी गतिनी प्राप्ति थाय छे, तेने (कुखगइ के०) अशुभविहायोगति नामकर्म कहियें.

६८ जेना उदयथी पोताना जीभचोरा, दांत, हरस, रसोळी प्रमुख अवयवें करी पोतेंज हणाय छे, तेने (उवघाय के०) उपघात नामकर्म कहियें.

७२ जेना उदयथी चार अशुभ वर्णादिक एटले कालो रंग, अने नीलो रंग, बे अशुभवर्ण. डुरभिगंध, ते अशुभगंध. तीखो रस ने कटुक रस, ए बे अशुभरस. गुरु, खर, शीत, तथा लूखो, ए चार अशुभ फरस. ए सर्वे मलीने नव अशुभ थाय, पण सामान्यें चार गणियें. एउनी प्राप्ति थाय छे, तेने (अपसव्वंवसुचक के०) अप्रशस्तवर्णचतुष्कनामें पापकर्म कहियें.

७३ जेना उदयथी छसंघयणमांना प्रथम संघयण विना पांच संघयणनी प्राप्ति थाय छे. जेना बे पासा मर्कटबंध उपर पाटो ए बे होय, पण वज्र ते खीली न होय, तेने रूषभनाराच कहे छे, जेने केवल मर्कटबंधज होय पण पाटो तथा खीली न होय, तेने नाराच कहे छे. जेने एक पासें मर्कटबंध होय, तेने अर्द्धनाराच कहे छे; ज्यां मांहोमांहे हाडकांने एक खीलीनो बंध होय, तेने कीलिका कहे छे; अने जे खीली विना मांहोमांहे अमस्तां अडकी रह्यां होय;

तेने छेवठो कहे छे. ए पांच संघयणनी जेथी करी प्राप्ति थाय छे. तेने (अपढमसंघयण के०) अप्रथमसंघयणरूप नामकर्म कहियें.

७२ जेना उदयथी छ संस्थानमांना पहेला संस्थान विना बीजा पांच संस्थाननी प्राप्ति थाय छे. तिहां जे वटवृक्षनी परें नाभिनी उपर सुलक्षणयुक्त, तथा नाभिनी नीचें निर्लक्षणयुक्त होय, तेने न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान कहे छे; जे नाभिनी नीचेनुं अंग सारुं अने नाभिनी उपरनुं अंग नरसुं होय, तेने सादिसंस्थान कहे छे. जे उदर प्रमुख लक्षणोपेत अने हाथ, पग, माथुं, कटि, प्रमाण रहित होय, तेने वामनसंस्थान कहे छे. जे हाथ, पग, माथुं, कटि प्रमुख प्रमाणोपेत अने उदर प्रमुख हीन होय, तेने कुब्जसंस्थान कहे छे. जे सर्व अवयव अशुभ होय, तेने हुंडकसंस्थान कहे छे. ए पांच संस्थाननी प्राप्ति थाय छे, तेने (संठाणा के०) अप्रथम संस्थानरूप नामकर्म कहियें. एवी रीतें सर्व

मळीने (पावस्स के०) पापतत्त्वना व्याशी प्र कार ते (हुंति के०) ठे ॥ १ए ॥

हवे स्थावरदशक कहे ठेः—

थावर सुहुम अपज्जं, साहारण म
थिर मसुभ डुभगाणि ॥ डुस्सर णा
इज्ज जसं, थावर दसगं विवज्जठं ॥२०॥

अर्थः—जेना उदयथी स्थावरपणुं प्राप्त थाय, तेथी जो तापादिकें पीडाय, तो पण त्यांथी खशी शकाय नहिं तेने प्रथम (थावर के०) स्थावरनाम कर्म कहियें, जेना उदयें दृष्टिने अगोचर एवा सर्व लोकमां व्यापी रहेला सूक्ष्मपणानी प्राप्ति थाय, ते पण पृथिव्यादिक पांचज जाणवा. तेने बीजुं (सुहुम के०) सूक्ष्म नामकर्म कहियें. जेना उ दयथी स्वयोग्यपर्याप्ति पूरी कस्या विनाज मरण पामे, तेने त्रीजुं (अपज्जं के०) अपर्याप्त नाम कर्म कहियें. जेना उदयथी अनंत जीव वचें एक औदारिक शरीरनी प्राप्ति थाय, एवी जे निगो

दावस्था, तेने चोथुं (साहारणं के०) साधारण नामकर्म कहियें. जेना उदयथी शरीरमां दंतादिक अवयव अस्थिर होय, तेने पांचमुं (अथिरं के०) अस्थिरनामकर्म कहियें. जेना उदयथी नाभिनी नीचेना अंगोनो भाग सारो न होय, पादादिकने स्पर्शें आगलो रोष करे, ते माटें तेने छठुं (असुभ के०) अशुभनामकर्म कहियें. जेना उदयथी सर्व लोकने अलखामणो लागे, तेने सातमुं (दुभगाणि के०) दौर्भाग्य नामकर्म कहियें. जेना उदयथी काकादिकना स्वरनी परें कानने कटुकता लागे, एवा स्वरनी प्राप्ति थाय छे, तेने आठमुं (दुस्सर के०) दुःस्वर नामकर्म कहियें. जेना उदयथी लोकने विषे तेनुं बोलवुं कोइ पण मान्य करें नहिं, तेने नवमुं (अणाइज्ज के०) अनादेय नामकर्म कहियें. जेना उदयथी लोकमां अपकीर्त्ति थाय, पण कोइ यश बोले नहिं, तेने दशमुं (अजसं के०) अयश नामकर्म कहियें.

एवी रीतें आ कह्युं जे (थावरदसगं के०) स्था

वरदशक, ते पुण्यतत्त्वमां कहेला त्रसदशकथी (विवज्जत्थं के०) विपर्ययार्थ जाणी लेवुं ॥ २० ॥

॥ इति पापतत्त्वविचारः समाप्तः ॥ ४ ॥

हवे आश्रवतत्त्व बहेंतालीश प्रकारें छे, ते कहे छेः—

इंदिअ कसाय अव्वय, जोगा पंच
चउ पंच तिन्नि कमा ॥ किरिआउ प
णवीसं, इमा उ ताउ अणुक्कमसो ॥२१॥

अर्थः— जेम जे मार्गें करी तलावमां पाणी आवे छे, तेने नालुं कहियें, तेम जेणें करी आत्माने विषे कर्मोनुं आववुं थाय छे, तेने आश्रव कहियें. ते श्रोत्र, चक्षु, नासिका, जिह्वा, तथा स्पर्शन, ए (पंच के०) पांच (इंदिय के०) इंद्रियो छे. क्रोध, मान, माया अने लोभ, ए (चउ के०) चार (कसाय के०) कषाय छे. प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन अने परिग्रह, ए (पंच के०) पांच (अव्वय के०) अव्रत

छे. मनोयोग, वचनयोग. तथा काययोग, ए (तिन्नि के०) त्रण (जोगा के०) योग छे, ए (कमा के०) अनुक्रमें सत्तर नेद थया, अने (किरिआउ के०) पाप क्रियाउ (पणवीसं के०) पच्चीश छे (ताउ के०) ते पच्चीश क्रियाउ (उ के०) वली (इमा के०) हवे कहेवाशे एवा लक्षणवती एम समस्त मली (अणुक्कमसो के०) अनुक्रमें करी जाणवी. एम बहेंतालीश नेद आश्रवतत्त्वना जाणवा.

ए आश्रव बे प्रकारें छे. एक द्रव्याश्रव अने बीजो नावाश्रव. तिहां जे जीवना शुनाशुनपरिणाम ते नावाश्रव कहियें. एटले इंद्रियना उपयोगरूप परिणाम तेमज कषाय, अव्रत तथा क्रियारूप परिणाम ते सर्व नावाश्रव जाणवो. तथा योग ते मन, वचन अने कायानुं आधारनूतकर्म जे वानुं कारण एवुं जे आत्मप्रदेशनुं कंपनपणुं, तेने नावाश्रव कहियें. तेमज ए नावाश्रवनुं निमित्त पामीने तेणें करी जीवने अष्टविध कर्मनो आश्रव थाय छे, तेने द्रव्याश्रव कहियें.

हवे पच्चीश क्रियाउ कहे छेः—

काइअ अहिगरणीया, पाउसिया
पारितावणी किरिया ॥ पाणाइवाइ
रंभिअ, परिग्गहिया मायवत्तीया॥२१॥

अर्थः— कायाने अजयणायें प्रवर्त्तावतां जे क्रिया लागे, ते पहेली (काइअ के०) कायिकी क्रिया. खड्गादिक अधिकरणें करी जे जीवोनुं हनन थाय, ते बीजी (अहिगरणीया के०) आधिकरणिकी क्रिया. जीव, तथा अजीव उपर द्वेषनी चिंतवना करवी, ते त्रीजी (पाउसिया के०) प्राद्वेषिकी क्रिया. पोताने तथा परने जे परिताप उपजाववो ते चोथी (पारितावणी के०) पारितापनिकी क्रिया. एकेंद्रियादिक जीवने हणवो तथा जे हणाववो, ते पांचमी (पाणाइवाइ के०) प्राणातिपातिकी क्रिया. कर्षण प्रमुखनी जे उत्पत्ति करवी, अथवा करावबी, ते छठी (रंभिअ के०) आरंभिकी क्रिया. धन धान्यादिक नवविध परिग्रह

मेळवतां तथा तेनी उपर मोह करतां जे क्रिया लागे, ते सातमी (परिग्गहिया के०) पारिग्रहिकी क्रिया. मायायें करी जे बीजाने ठगवुं, ते आठमी (मायवत्तीया के०) मायाप्रत्ययिका क्रिया. मूळमां जे (किरिआ के०) क्रिया शब्द छे, ते उक्त प्रकारें सर्व शब्दोने जोडवो ॥ २२ ॥

मिछादंसणवत्ती, अप्पच्चरकाण दि
ठि पुठीअ ॥ पाडुच्चि अ सामंतो,
वणीअ नेसछि साहछी ॥ २३ ॥

अर्थः– जिनवचन असद्दहतो थको जे विपरितप्ररूपणा करतां क्रिया लागे, ते नवमी, (मिछादंसणवत्ती के०) मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी क्रिया. अविरतियें करी पच्चरकाण कीधा विना जे सर्व वस्तुनी क्रिया लागे, ते दशमी (अप्पच्चरकाण के०) अप्रत्याख्यानिकी क्रिया. कौतुकें करी अश्वप्रमुखने जोवुं, ते अग्यारमी (दिठि के०) दृष्टिकी क्रिया. रागनें वशें करीने जे पुरुष, स्त्री,

गाय, बलद, वस्त्र प्रमुख सुकुमार वस्तुने जे स्पर्श करवो, तेथी जे क्रिया लागे, अथवा कोइ संदेह उत्पन्न थयाथी पूछवुं तेथी जे क्रिया लागे, ते बारमी (पुठीअ के०) स्पृष्टिकी अथवा एष्टिकी क्रिया. जीव तथा अजीव आश्रयी जे राग द्वेष थाय छे, एटले बीजाने घेर हस्ती, घोडा, वस्त्र, नूषण प्रमुख देखी द्वेष धरे, जे ए वस्तु एनी पासें केम ? एवुं चिंतवी कर्मबंध करे, ते तेरमी (पाडुच्चिअ के०) प्रातित्यकी क्रिया. पोताना अश्व प्रमुखने जोवा माटें आवेला लोकोने प्र शंसा करतां जोइने जे हर्ष करवो. अथवा दूध, दधि, घृत, तेल प्रमुखनुं नाजन उघाडुं मू क्याथी तेमां जे त्रस जीव आवी पडे, ते चौद मी (सामंतोवणीअ के०) सामंतोपनिपातिकी क्रिया. राजादिकोना आदेशथकी यंत्र शस्त्रादि कनुं जे आकर्षण करवुं, अथवा शस्त्र घडाववुं. वाव्य, कूवानुं खनन कराववुं, ते पंदरमी (नेसत्थि के०) नैशस्त्रिकी क्रिया. पोताने हाथे अथवा

ज्ञानादिक जीवथी तथा शस्त्रादिक अजीवथी जे त्रसकायिक जीवने मारवा, अथवा कोइ पुरुष अत्यंत अभिमान करीने क्रोधित चित्तवंत थको जे काम पोताना नोकरो करी शके, ते काम पोताना हाथथी, करे ते शोलमी (साहत्थी के०) स्वहस्तिकी क्रिया ॥ १३ ॥

आणवणि विआरणिआ, अणभोगा
अणवकंख पच्चइआ ॥ अन्ना पउग
समुदा, ण पिज्जदोसेरिआवहिआ ॥२४॥

अर्थः— जीव तथा अजीवने कांइ आज्ञा करवी, अथवा तेउनी मारफतें कांइ अणाववुं. तेथी जे क्रिया लागे, ते सत्तरमी (आणवणि के०) आनयनिकी क्रिया. जीव तथा अजीवनुं जे विदारण करवुं, भांगवुं, ते अढारमी (विआरणिआ के०) विदारणिका क्रिया. उपयोग विना शून्य चित्तें करी कांइ वस्तु लेवी, अथवा मूकवी, तथा उठवुं, बेसवुं, गमनादिक करवुं, ते उगणीशमी

(अणभोगा के०) अनाभोगिकी क्रिया. आ लोक तथा परलोकथी जे विरुद्ध कार्यनुं आच रण करवुं, ते वीशमी (अणवकंखपच्चइआ के०) अनवकांक्षप्रत्ययिका क्रिया. हवे (अन्ना के०) अपरा एटले पूर्वे वीश कही तेथी बीजी, मन, वचन, तथा कायाना योगनुं जे दुःप्रणिधान, तेमां जे प्रव र्त्तन करवुं, पण निवृत्तवुं नहिं, ते एकवीशमी (पओग के०) प्रायोगिकी क्रिया. कोइक एवुं महोटुं पाप करे, के जेथकी आठे कर्मनुं समुदायपणे, ग्रहण थइ जाय, ते बावीशमी (समुदाण के०) समुदानकी क्रिया. माया तथा लोभवडे जे कांइ करवुं, एटले प्रेमनां वचन एवां बोले, के जे थ की रागनी अधिक वृद्धि थाय, ते त्रेवीशमी (पि ज्ज के०) प्रेमिकी क्रिया. क्रोध तथा मानवडे एवां गर्वित वचन बोले, के जेथकी आगलाने द्वेष उ पजे, ते चोवीशमी (दोस के०) द्वेषिकी क्रिया. अने केवल काययोगनुं जे प्रवर्त्तावबुं, तेणें करी जे क्रिया लागे, ते पच्चीशमी (इरिआवहिया

के०) ऐर्यापथिकी क्रिया कहियें. ए ऐर्याप थिकी क्रिया अप्रमत्त साधुने तथा केवलीने पण होय, एटले केवलीने केवल काययोगथी उपजे छे, तथा समिति प्रमुख साचवतां पण साधुने दो षनुं पडिक्कमवुं ते पण ऐर्यापथिकी क्रिया॥ २४॥

ए पच्चीश क्रियानुं स्वरूप कहे छे. १ कायायें करीने जे थाय, ते कायिकी क्रिया. २ जीव पो ताना आत्माने नरकादिकमां जावाने वास्ते अ धिकारी करे, ते आधिकरणिकी क्रिया. ३ जेमां प्रकर्षें अधिक दोष (द्वेष) होय, ते प्रदोषक्रिया. ४ जीवने परिताप आपवाथी उत्पन्न थाय जे क्रिया, ते पारितापनिकी क्रिया. ५ प्राणीयोने वि नाश करवानी जे क्रिया, ते प्राणातिपातिकी क्रिया. ६ पृथिव्यादिक छकायने उपघात करवानुं जे क्रियामां लक्षण होय, ते आरंभिकी क्रिया. ७ विविध उपायें करी धन उपार्जन करवामां तथा धन रक्षण करवामां जे मूर्छाना परिणाम, तेथी उत्पन्न थयेली जे क्रिया, ते पारिग्रहिकी क्रिया.

ए मायाज ले प्रत्यय एटले हेतु जेनी, एटले मायानी जिहां प्रधान प्रवृत्ति ले, ते माया प्रत्यचिकी क्रिया. ए मिथ्यात्वज ले प्रत्यय एटले कारण जेनुं ते मिथ्यात्वदर्शनप्रत्ययिकी क्रिया. १० संयमना विघात कारक जे कषाय, तेना उदयथी प्रत्याख्याननुं न करवुं, ते अप्रत्याख्यानिकी क्रिया. ११ रागादिककलुषित चित्तें करी जे जीव, अजीवनुं देखवुं, ते दृष्टिकी क्रिया. १२ राग द्वेष अने मोहसंयुक्त चित्तें करीने जे स्त्रीयादिकना शरीरनो स्पर्श करवो, ते स्पृष्टिकी क्रिया. १३ पूर्वें अंगीकार करेलां पापना उपादानकारण रूप जे अधिकरण, तेनी अपेक्षायें जे क्रिया उत्पन्न थाय, ते प्रातित्यप्रत्ययिकी क्रिया. १४ (समंतात् के०) सर्वदिशाउथी (उपनिपात के०) आववुं एटले जे स्थानमां जोजनादिकने लीधे सर्व दिशाउथी स्त्रीयादिक जीवोनुं आववुं थाय, ते समंतोपनिपात, तेणें करी जे क्रिया उत्पन्न थाय. ते सामंतोपनिपातिकी क्रिया. १५ जे व

रोपदेशित पापमां घणोक काल प्रवृत्ते, ते पापनी, तावधी अनुमोदना करे, ते नैसृष्टिकी क्रिया. १६ पोताना हाथथी जे करे, ते स्वहस्तिकी क्रिया. १७ श्रीअर्हंत नगवंतनी आज्ञा उल्लंघन करी पोतानी बुद्धिथी जीवाजीवादि पदार्थोनी प्ररूपणाद्वारा जे क्रिया, ते आज्ञापनिका क्रिया. १८ बीजाना अछतां मागां आचरणने प्रकाश करी, तेनी पूजानो नाश करवो, तेथी उत्पन्न थयेली जे क्रिया, ते वैदारणिका क्रिया. १९ (आनोग के०) उपयोग तेथकी जे विपरीत होय. तेने अनानोग कहियें. तेणें करीने उपलक्षित जे क्रिया, ते अनानोगिकी क्रिया. २० पोतानी तथा पारकी जे अपेक्षा करवी, तेनुं नाम अवकांक्षा छे, तेथकी जे विपरीत होय, तेने अनवकांक्षा कहीयें. तेज छे (प्रत्यय के०) कारण जेनुं एटले परमेश्वरें कहेला जे करवा योग्य विधियो, ते विधियोमांहेला कोइ कोइपण विधियो पोताने अथवा कोइ परजीवने हितकारी

छे, ते विधियोमां प्रमादना वशथकी अनादर क
रवो, ते अनवकांक्षाप्रत्ययिका क्रिया. २१ प्रयोग
ते एक तो दोडवुं, चालवुं, इत्यादिक कायानो व्या
पार, बीजुं हिंसाकारी कठोर जूठादिक बोलवुं,
ते वचननो व्यापार, त्रीजो परानिद्रोह, ईर्ष्या अ
जिमानादिक मननो व्यापार, ए त्रणनुं जे करवुं,
ते प्रायोगिकी क्रिया. २२ जेणें करी विषयग्रहण
करीयें. ते समादान इंद्रिय छे. तेनो जे देशथी
अथवा सर्वथी उपघातरूप व्यापार, ते समुदान
क्रिया. २३ (प्रेम के०) माया अने लोज, तेणें
करी जे थाय, ते प्रेमप्रत्ययक्रिया. २४ (द्वेष
के०) क्रोध अने मान, तेणें करी जे थाय, ते
द्वेषप्रत्ययिकी क्रिया. २५ चालवाथी जे क्रिया
थाय, ते ऐर्यापथिकी क्रिया. ए क्रियाउमांहेली
केटलीएक क्रियाउ आपसमां सरखी देखाय छे.
तो पण सरखी समजवी नहीं.

ए पच्चीश क्रियाउ कही, ते पूर्वें कहेला सत्तर

भेदो सार्थें मेलवतां आश्रवतत्त्वना बहेंतालीश भेद थाय ॥ इति आश्रवतत्त्वं समाप्तं ॥ ५ ॥

॥ हवे संवर तत्त्वना सत्तावन भेद कहे छे ॥

समिई गुत्ति परीसह, जइधम्मो भा
वणा चरित्ताणि॥पण ति डुवीस दस
बार, पंच भेएहिं सगवन्ना॥ २५ ॥

अर्थः—जेणें करी नवां कर्मों आवतां रोकाय, तेने संवर कहे छे, तेना बे भेद छे. एक द्रव्यसंवर अनें बीजो भावसंवर. तिहां नवा कर्मोनुं जे रोकाववुं, तेने द्रव्यसंवर कहियें, अने समिति प्रमुख पणे करी परिणामने पाम्युं जे शुद्ध उपयोगरूप द्रव्यपणुं, तेथी भावकर्मना रोधक आत्माना परिणाम थाय छे, तेनें भावसंवर कहियें. तिहां सम्यक् प्रकारें जे चेष्टा करवी, तेने (समिई के०) समिति कहियें. ते (पण के०) पांच छे. योगनुं जे गोपन करवुं, तेने (गुत्ति के०) गुप्ति कहियें. ते (ति के०) त्रण छे. सर्वप्रकारें निर्जराने अर्थें

जें सहन करवुं, तेने (परीसह के०) परिसह कहियें. ते (डुवीस के०) बावीश छे. यतिने जें अवश्य आचरवा योग्य होय, तेने (जइधम्मो के०) यतिधर्म कहियें. ते (दस के०) दश छे. मननी चंचलता निवारण करवा सारु जे नाववुं, तेने (नावणा के०) नावना कहियें, ते (बार के०) बार छे. कर्मक्षय थवाने अर्थें अहिंसादिक परिणामें करी जे यत्नादिकनुं आचरवुं, तेने (चरित्ताणि के०) चारित्र कहियें. (ते पंच के०) पांच छे. एवी रीतें (नगवन्ना के०), सत्तावन (नेएहिं के०) नेदें करी संवर तत्त्व जाणियें ॥ २५ ॥ हवे ए समिति प्रमुखना नेद विस्तारें कहेतो थको प्रथम आ गाथायें करी पांच समिति तथा त्रण गुप्तियो कहे छेः—

॥ अनुष्टुब् वृत्तं ॥ ईरिया नासेसणा दाणे, उच्चारे समिई सु अ ॥ मणगुत्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥ २६ ॥

अर्थः– गाथाना पूर्वार्द्धें करी पांच समितिनुं वर्णन करे छे. तिहां समिति एटले सम्यक् चेष्टा. तेमां १ जयणा राखी उपयोग सहित धूंसरा प्रमाण भूमिका दृष्टियें जोइने जे चालवानी चेष्टा करवी, तेने पहेली (ईरिया के०) ईर्यासमिति कहियें. तथा २ सम्यक् प्रकारें निरवद्य भाषा बोलवारूप जे चेष्टा करवी, तेने बीजी (भास के०) भाषासमिति कहियें. तथा ३ सम्यक् प्रकारें बहेंतालीश दोष रहित निर्दोष एवा आहार, वस्त्र, पात्र, वसती संबंधी जे भिक्षानी गवेषणा करवी, तेनी जे चेष्टा, तेने त्रीजी (इसणा के०) एषणासमिति कहियें. तथा ४ सम्यक् प्रकारें पुंजी प्रमार्जी, आसन प्रमुखना आदान, एटले ग्रहण करवानी जे चेष्टा करवी, तथा तेने निक्षेप एटले त्याग करवानी जे चेष्टा करवी, तेने चोथी (आदाणे के०) आदान निक्षेपणासमिति कहियें. आ ठेकाणें मूलमां आदानशब्द छे ते कहेवाथी निक्षेपण शब्द पण साथें लेवो. केनीपेठें ? तो के जेम भीम शब्द क

कहेवाथी जीमसेन समजाय छे, तेम अहिंयां पण जाणी लेवुं. अने ५ परठवा योग्य जे मलमूत्रादिक वस्तु तेने स्थंमिलजूमिकाने विषे उपयोग पूर्वक जे मूकवानी चेष्टा करवी, तथा सदोष उपकरणादिकने परठववानी जे चेष्टा करवी, तेने पांचमी (उच्चारे के०) उच्चार एटले मलमूत्रादिक तेने परठववुं, माटें पारिष्ठापनिका समिति कहियें. एवी रीतें ए पांच (समिई के०) समिति ते (सु के०) जली परिवृत्तलक्षण जाणवी (अ के०) हवे गाथाना उत्तरार्द्धवडे त्रण गुप्तिनुं वर्णन करे छेः—प्रथम (मणगुत्ति के) मनोगुप्ति एटले मननुं गोपन करवुं, तेना त्रण जेद छेः—तेमां अपध्यानें करी उत्पन्न थयेली कल्पनाजालनो जे वियोग, ते पहेलो जेद, धर्मध्यानें करी मध्यस्थपणानी जे परिणति, ते बीजो जेद, अने सर्वथा मनोयोग रोकायाथी तेरमा गुणगणाना अंतनेविषे जे आत्मारामता थाय छे, ते त्रीजो जेद जाणवो. बीजो (वयगुत्ति के०) वचनगुप्ति एटले वचननुं गोपन करवुं, तेना बे जेद

छेः—सर्वथा वचननो रोध करवाने अर्थे मौननो अभिग्रह धारण करीने हाथ प्रमुखनी संज्ञावडे कार्य करवुं, ते पहेलो नेद. अने मौननो अभिग्रह धारण नहिं कर्या छतां याचनाप्रमुख कार्य करती वेलायें मुखें मुहपत्ती दइने जे जयणाथी बोलवुं, ते बीजो नेद जाणवो. इहां नाषासमितिमां तो केवल जयणायें बोलवानुंज कह्युं छे, अने एमां तो एक सर्वथा वचननो रोध करवो अने बीजुं जयणायें बोलवुं, ए जुदां जुदां बे स्वरूप देखाड्यां छे. ए उपरथी वचनगुप्ति अने नाषासमिति, ए उमां ए अंतर छे, एम जाणवुं. अने (तहेव के०) तेमज त्रीजी (कायगुत्ति के०) कायगुप्ति एटले कायानुं गोपन करवुं. तेना पण बे नेद छेः— उपसर्ग परिसह आदि उत्पन्न थयाथी पण जे काया स्थिर राखवी, अथवा चौदमे गुणगणें योग निरोधावस्थायें सर्वथा शरीरनी चेष्टानो त्याग करवो, ते पहेलो नेद, अने शयन, आसन प्रमुखने विषे सूत्रोक्त विधियें करी चेष्टानो नियम क

रवो. एटले माथा तले हाथ घाली गोठण सं कोची, कूकडीनी परें पग पसारीने सूवुं, ते बीजो नेद जाणवो. ए समिति अने गुप्तिना अर्थमां एटलुं विशेष डे, के सम्यक् प्रकारें चेष्टारूप जे प्रवृत्ति करवी, ए समितिनुं लक्षण डे. अने शुन स्थाननेविषे प्रवृत्ति करवी, तथा अशुनस्थानथी निवर्त्तन थवुं, एम प्रवृत्ति तथा निवृत्तिरूप गुप्तिनुं लक्षण डे. ए पांच समिति अने त्रण गुप्ति मली आठ प्रवचन माता कहेवाय डे, ते चारित्र रूप शरीने उपजाववा तथा तेना पालन पोषण करवा माटें माता समान डे ॥ २६ ॥

हवे बावीश परिसह कहे डे.

खुहा पिवासा सी उण्हं, दंसा चेला रइछिउ ॥ चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ॥ २७ ॥

अर्थः—तिहां प्रथम परिसह शब्दनो अर्थ कहे डे, जे जैनमार्गने नहिं मूकवाने अर्थें तथा कर्मनी

निर्ज्जरा करवाने अर्थे दुःखोने (परि के०) समस्त प्रकारें (सह के०) सहन करवुं पडे, तेने परिसह कहीयें, व्याकरणमां लख्युं छे के,"परिसह्यती ति परिसहः" ते परिसह,सर्वे मली बावीश छे, तेमां एक दर्शनपरिसह, अने बीजो प्रज्ञापरिसह, ए बे परिसह तो, जैनमार्ग न मूकवाने अर्थे छे, अने शेष वीश परिसह जे छे, ते कर्मनिर्ज्जरा करवाने अर्थे छे. ए बावीशे परिसहोना अर्थसहित नाम तथा एक पछी बीजा परिसहने अनुक्रमें कहेवानां कारण कहे छे.

१ (खुहा के०) क्षुधापरिसह छे, ते क्षुधा एवुं नूखनुं नाम छे, ए नूखथी उत्पन्न थनारी वेदना, बीजी समस्त वेदनाउथी अधिक छे, कारण के नूख जे छे, ते आंतरडां अने पेट तेने बालनारी छे, तिहां गमे तेवी नूख लागे, तो पण साधु अनेषणीय आहार लिये नहिं, पोतानी प्रतिज्ञाथी चलायमान थाय नहिं.अने आर्त्तध्यान पण न करे. परंतु रूडे परिणामें क्षुधा सहन करे. ए क्षुधा स

हन करवो अत्यंत दुर्लभ छे. माटें सर्व परिस होमां प्रथम ए क्षुधापरिसह गण्यो छे.

२ (पिवासा के०) पिपासापरिसह छे. ते पूर्वोक्त क्षुधानी पीडा मटाडवा सारु उंचा नीचा घरोने विषे विहार करवो, पडे, तेना श्रमें करी तृषा उत्पन्न थाय, माटें क्षुधा पछी बीजो पिपा सापरिसह गण्यो छे. तिहां साधु प्राशुक ए षणीय जलने अनावें तृषायें व्याकुल छतो पण अनेषणीय शीतल जलादिकनी वांछा करे नहिं, परंतु सम्यक् परिणामें तृषा सहन करे.

३ (सी के०) शीतपरिसह ते क्षुधा तथा तृषायें पीडितने शीतपणुं थाय. माटें त्रीजो शीतपरिसह गण्यो छे. तिहां शीतकालने विषे जेवारें अत्यंत टाहाड पडे, तेवारें कल्पनीय व स्त्रने अनावें गृहादिकें रहित छतो पण अकल्प नीय वस्त्रनी वांछा न करे, तथा पोतें अग्नि प्र दीप्त करी तापे नहिं, तेमज बीजायें प्रदीप्त क

रेला अग्निथी पण तापे नहीं, परंतु अल्प जीर्ण वस्त्रें करी सम्यक् परिणामें शीत सहन करे.

४ (उसिणं के०) उष्ण परिसह, ते उष्ण ऋतु जे छे, ते पूर्वोक्त शीत ऋतुनी विपक्षीभूत छे, माटें शीत पछी चोथो उष्णपरिसह गण्यो छे, तिहां उष्णकालनेविषे तप्तशीलायें रह्यो छतो सूर्यनुं प्रतिबिंब माथे आवे, एवा मध्याह्न समयें अत्यंत आतापना थये थके पण छत्रनी अथवा लुगडानी छायाने तथा विंजणा प्रमुखना वायुने अणवांछतो थको तेमज स्नान विलेपनादिकने वर्जतो थको सम्यक् परिणामें आतापना सहन करे.

५ (दंसा के०) दंशपरिसह, ते पूर्वोक्त उष्णकाल पछी वर्षाकाल आवे, ते समयें डांस, मच्छरादिक बहु थाय, माटें उष्ण पछी पांचमो दंशपरिसह गण्यो छे. तिहां दंशादि जू, मांकड, इत्यादि क्षुद्र जीवो जेवी रीतें संग्राममां शत्रु, बाणनो प्रहार करे, तेवो डंक मारे, तो पण ते उंना उपद्रवथी ते स्थानक तजीने अन्य स्थान

कें जवानी इछा न करे, अथवा तेने निवारवा सारु पंखो करवानी वांछा पण न करे, तथा ते डंसादिक जीवो पोतानुं लोही पिये, तो पण तेना उपर द्वेष करे नहिं, एम सम्यक् परिणामें दंशपरिसह सहन करे.

६ (अचेल के०) अचेलकपरिसह, ते पूर्वोक्त दंशादिकें पराजव पाम्यो थको पण वस्त्रने वांछे नहिं, तेथी अचेलक परिसहने छठो गण्यो छे, अचेलक एटले शुं ? तो के (चेल के०) वस्त्र तेनो (अ के०) अजाव ते अचेलक जाणवो. आ ठेकाणें सर्वथा वस्त्रोनो अजाव होय ते तुंज नाम अचेलपरिसह नथी, परंतु आगममां जे जे वस्त्र राखवानुं प्रमाण कह्युं छे, ते प्रमाणें राखे तो तेने अचेलक परिसह कहेवो. हवे त्यां शंका करे छे, के जो कांइपण वस्त्र राखे, तो पण ते परिग्रहज कहेवाय? त्यां कहे छे, के जो मूर्छा सहित वस्त्र राखे तो परिग्रह कहेवाय, परंतु मूर्छारहित अपरिग्रहपणायें शास्त्रोक्त रीतें राखे, तो

अचेलक जाणवो. तिहां साधुने फाटेलुं अल्प मूल्यनुं अने जूनुं वस्त्र छतां कल्पनीय वस्त्र न मले, तथापि मनमां दीनता न करे, तथा एम पण न विचारे के आज काल कोइ नवा वस्त्रनो आप नार पण मलतो नथी, माटें हवे केम करवुं? अथवा आ वस्त्रो तो सडेलां तथा जूनां छे, माटें बीजां नवां पहेरुं? एवो विचार पण न करे. एम रूडे प्रकारें अचेलकपरिसह सहन करे.

७ (अरइ के०) अरतिपरिसह. ते पूर्वोक्त अचेलक अप्रतिबद्धविहारी छतां तेने शीतादिक ना संभवे करी अरति उपजे, माटें अचेलक पछी सातमो अरतिपरिसह गण्यो छे, तिहां जे रम ण करवुं, ते रति अने तेथी विपरीत जे अरम णिकता ते अरति जाणवी. आ ठेकाणें साधुने संयममां विहार करतां अरति उपजवानां कारण बने, तेवारें धर्मने विषे रत थाय, क्षांत्यादिक दश प्रकारना यतिधर्मने ध्यावे, श्रीदशवैकालिक नी प्रथमचूलामां अढार वस्तुनुं चिंतवन करवा

थी अरति दूर थाय छे, ते प्रमाणें चिंतवन करी अरति दूर करे.

८ (इत्थिउ के०) स्त्रीपरिसह. ते पूर्वोक्त संयमने विषे अरति उत्पन्न थवाथी स्त्री निमंत्री तेनी अभिलाषा करे, माटें अरति पछी आठमो स्त्रीपरिसह गण्यो छे. तिहां स्त्रीयोने दीठां थकां तेनां अंग, प्रत्यंग, संस्थान, सुरति, हसवुं, मनो हरपणुं ललित विभ्रम विलासादिक चेष्टाउने अणचिंतवतो थको रहे, स्त्रीयोने मोक्षमार्गमां अर्गलासमान जाणी, तेने कामबुद्धियें करी दृष्टि साथें दृष्टि मेलवी जूवे नहीं, ते स्त्रीपरिसह.

ए (चरिआ के०) चर्य्यापरिसह. चर्य्या ए टले चालवानुं नाम छे. तिहां एकस्थलें रहेतां मंदसत्वने पूर्वोक्त स्त्रीउपर अनुराग थाय, ते माटें एक स्थानकें न रहे, तेथी ए स्त्रीपरिसह पछी नवमो चर्य्यापरिसह गण्यो छे. तिहां आलस रहित थकां ग्राम, नगर, कुलादिकने विषे विहार करवो, तेंने इव्यथी चर्य्या कहीयें. अने जो

एक स्थानकें मास कल्पादिकें रहेतां पण अप्र तिबद्ध ममत्वरहितपणुं अंगीकार करवुं, ते भावथी चर्या कहियें.

१० (निसिहिया के०) नैषेधिकीपरिसह. ते पूर्वोक्त ग्रामादिकने विषे जेम अप्रतिबद्ध विहार करवो, तेम देहादिकने विषे पण अप्रतिबद्ध स्वाध्यायने अर्थे नैषेधिकी करवी, तेमाटें चर्या पछी दशमो नैषेधिकी परिसह गण्यो छे. जे निषेधियें तेने नैषेधिकी कहीयें. तिहां एक पापकर्म, बीजुं गमनागमन, तेहीज निषेध करवानुं छे प्रयोजन जेनुं, तेने नैषेधिक कहीयें. अहियां शून्य घर श्मशानादिक सर्पबिल सिंहगुफादिकनें विषे कायोत्सर्गें रह्यां थकां तिहां नाना प्रकारना उपसर्गना सद्भावें पण अशिष्टचेष्टानो निषेध करवो, अर्थात् माठी चेष्टा न करवी, तेने नैषेधिकीपरिसह कहीयें. अथवा कोइ ठेकाणें निषद्या परिसह पण कह्युं छे, ते निषद्या एवुं रहेवाना स्थानकनुं नाम छे, त्यां स्त्री, पशु, पंडक वर्जित

स्थानमां रहेतां थकां जो इष्टानिष्ट उपसर्ग थाय, तो पण पोताना चित्तमां चलायमान न थाय, परंतु ते सर्व उपसर्गने उद्वेग रहितपणे सम्यक् रीतें सहन करे, ए नैषेधिकी अथवा निषद्यापरिसह.

११ (सिज्जा के०) शय्यापरिसह. ते पूर्वोक्त नैषेधिकीयें स्वाध्याय करी, शय्यायें आवे, माटें अगीयारमो शय्यापरिसह गण्यो छे. जेने विषे शयन करीयें तेने शय्या कहीयें, तिहां शय्या ते वसति, उपाश्रयें उंची नीची भूमि होय, अथवा घणी धूल, घणी टाढ, गणी उष्णता अने कूडा कांकरवाली भूमि होय, तेमां सकोमल अथवा कठिन आसन पामीने तेने सारुं अथवा मातुं कहे नहिं, उद्वेग करे नहिं, परंतु सम्यक् परिणामें ते दुःखने सहन करे, ते शय्यापरिसह.

१२ (अक्कोस के०) आक्रोशपरिसह. तें पूर्वोक्त शय्यायें रहेलाने शय्यांतर एटले शय्यानो आपनार अथवा बीजो कोइ आक्रोश करे, माटें शय्या पछी बारमो आक्रोशपरिसह गण्यो

छे. ते आवी रीतें केः—यतिने कोइ अज्ञानी पुरु
ष, क्रोधने वश थइ अनिष्ट तिरस्कारनां वचन बो
ले, तेने देखी तेनी उपर दृढप्रहारीनी पेरें कोप
करे नहिं, परंतु एवुं विचारे, जे आ पुरुष, खरा
ने वास्ते मने अनिष्ट वचन कहे छे, ए मह्रारो उप
कारी छे. केम के? मने आ प्रमाणें ए शिक्षा आपे छे,
तेथी फरी हुं एवुं काम नहिं करीश? अथवा ए पु
रुष जे कहे छे, ते तो हुं करतो नथी,तथापि माहारे
एनी उपर जे कोप करवो ते युक्त नथी,एम चिंतवी
क्रोध न करे, एम सम्यक् रीतें आक्रोश सहन करे.

१२ (वह के०) वधपरिसह. ते पूर्वोक्त
आक्रोशनो करनार जे होय, ते वध पण करे,
माटें आक्रोश पछी तेरमो वधपरिसह गएयो छे,
तिहां कोइ डुरात्मा आवीने साधुने ढींका, पाटु,
चाबक,कशादिकना आकरा प्रहार करे, अथवा वध
करे, तो पण स्कंधसूरिना शिष्योनी पेरें तेना उ
पर बिलकुल रोष आणे नहिं, परंतु अकलुषित चित्त
वंत थको एवी चिंतवना करे,के ए मह्रारुं शरीर तो

पुद्गलरूप छे, ए तो अवश्य विध्वंस थवानुं छे, अने महारो आत्मा तो एथकी जूदोज छे, कारण के आत्मानो तो कोइ विध्वंस करी शकेज नहिं, तो आ शरीरना संबंधथी मनें जे दुःख थाय छे, ते तो माहारां करेलां कर्म उदय आव्यां छे, तेनुं ए फल छे? एवी बुद्धिथी वधपरिसहने सहन करे.

१४ (जायणा के०) याचनापरिसह. ते पूर्वोक्त उपरथी हणाणाने औषधादिकनी याचना करवानुं प्रयोजन थाय, माटें वध पछी चौदमो याचनापरिसह गण्यो छे. जे अनेरा पासेंथी याचीयें, तेने याचना कहीयें. ते आवी रीतें केः— यतियें वस्त्र, पात्र, अन्न, पान, उपाश्रय, प्रमुख कोइ पण चीज अर्थात् एक सली जेटली चीज पण माग्या विना लेवी नहिं. यद्यपि पोतानी शोभा राखवाने अर्थें मागे नहिं, तथापि पोताने प्रयोजन थये थके लज्जा छांमीने याचना करे, परंतु एवुं चिंतवे नहिं जे रांधेला धान्यने अर्थें जला माणसने घेर जइ याचना करवी, ते कर

तां तो गृहस्थावासमां रहेवुंज नलुं, के ज्यां आ पणा भुजदंमना पराक्रमथी उपजाव्युं जे अन्न, ते दीन हीनादिकने आपी, पढी जमीयें, एवी विचारणा करीने गृहस्थपणाने इछे नहीं, अथ वा याचना करतां कोइ आपशे, किं वा नहिं आ पशे? तो हुं आ गृहस्थनें घेर जइ लाखनो मर्म गमावीने शी रीतें याचना करुं? इत्यादिक चिंतवना न करतां याचना करे ॥ १७ ॥

अलाज रोग तण फासा, मल स
क्कार परीसहा ॥ पन्ना अन्नाण स
म्मत्तं, इअ बावीस परीसहा ॥ १८ ॥

१५ (अलाभ के०) अलाभपरिसह. ते पू र्वोक्त याचना कस्या बतां पण लाभांतरायना उ दयथी कोइ वारें माग्यां थकां पण मले नहीं, माटें याचना पढी पंदरमो अलाभपरिसह गण्यो ढे. ते आवी रीतें के:-यतिने कोइ वस्तुनी इछा ढे, अने ते वस्तु गृहस्थना घरमां पण [illegible] ढे ते

साधु मागवा गया छतां तेने गृहस्थ आपे नहीं, ते वारें ढंढणकुमारनी पेठें चित्तमां उद्वेग करे नहीं विषाद न करे, मुखराग फेरवे नहीं, तेमज आपनारनुं मातुं पण चिंतवे नहीं, दुर्वचन पण बोले नहीं अने समता धारण करीने मनमां विचारे जे आजे नहिं मल्युं, तो काले मली जाशे? जेवारे मलशे, तेवारें लेश्युं? ए रीतें अलाज परिसह सहे.

१६ (रोग के०) रोगपरिसह. ते पूर्वोक्त अलाजयकी आंतप्रांतजोजनें करी रोगोत्पत्ति थाय, माटें अलाज पछी शोलमो रोगपरिसह गण्यो छे. तिहां साधुने जेवारें कास, श्वास, ज्वर, अतिसारादिक रोग उपजे, तेवारें जे गछबाहिर जिनकल्पी साधु होय, ते तो चिकित्सा करवानी इछा पण न करे, अने पोताना कर्मनो विपाक चिंतवे, परंतु जे स्थविरकल्पी गछवासी साधु होय, ते आगमोक्त विधियें करी निरवद्य चिकित्सा करावे, मनमांहे कर्मविपाक चिंतवतो रहे, पण हाय वोय करे नहीं, जो अत्यंत वेदना

थती होय, तो पण आर्त्तध्यान करे नहिं, परंतु सनत्कुमारनी पेरें सम्यक् प्रकारें वेदना सहन करे.

१७ (तणफासा के०) तृणस्पर्शपरिसह. ते पूर्वोक्त रोगीने शय्यायें सूतां थकां तृणस्पर्श थाय, माटें रोग परिसह पढी सत्तरमो तृणस्पर्श परिसह गण्यो छे. तिहां गछनिर्गत साधुने तृणनोज संथारो कह्यो छे, अने गछवासी साधुने तो सापेक्ष संयम थाय छे, माटें ते वस्त्र पण लिये छे, परंतु जेवारें भूमिका भीनी होय अथवा वस्त्र पुराणुं थयुं होय, किंवा चोरें चोरी लीधुं होय, तेवारें केवल भाजनो अढी हाथ प्रमाण संथारो छते तिहां तृणना अग्रभाग तीखा होय, ते शरीरने लागे, तेथी पीडा उत्पन्न थाय. तो पण दुःख चिंतवे नहिं समाधिनो त्याग करे नहिं.

१८ (मल के०) मलपरिसह, ते पूर्वोक्त तृणस्पर्शे करी परसेवाने संयोगें मल उपजे, माटें तृण पढी अढारमो मलपरिसह गण्यो छे. अहींयां परसेवाने पाणीयें करी साधुना शरीरने

विषे रजनो कठिन मेल बंधाइ जाय, ते घणो मेल कृष्ण कालना तापने संयोगें परसेवाथी भीजा इने दुर्गंधें गंधाय, तो पण ते दुर्गंधने दूर करवा सारु स्नानादिकनी इच्छा करे नहिं. वली ए थकी क्यारें हुं छूटीश? एवी चिंतवना पण न करे.

१९ (सक्कार के०) सत्कारपरिसह. ते पूर्वोक्तमलव्याप्त पुरुष, कोइ पवित्र अंगवालानो सत्कार थतो देखी कांइक पोतें पण सत्कारादिकनी वांछा करे, माटें मल पछी उगणीशमो सत्कारपरिसह गण्यो छे. ते आवी रीतें केः— साधुने कोइयें स्तवन, नमन, चरणस्पर्श, सन्मुख जवुं, ऊनुं थावुं, आसन देवुं, अशनादिकनुं दान देवुं, अथवा महोटा कोइ राजादिकें निमंत्रणादिकनुं करवुं, एवो सत्कार पोताने थतो देखीने मनमां उत्कर्ष आणे नहिं, अने सत्कार न थवाथी मनमां विषाद पण पामे नहीं.

२० (पन्ना के०) प्रज्ञापरिसह. ते पूर्वोक्त सत्कारना जयथी प्रज्ञाने बाहुल्यें गर्व न करवो,

तेमज प्रज्ञानें अज्ञावें खेद पण न करवो, माटें सत्कार पछी वीशमो प्रज्ञापरिसह गण्यो छे, ते आवी रीतें:– जेणें करी वस्तुनुं तत्त्व (प्र के०) प्रकर्षें करी (ज्ञा के०) जणाय, तेने प्रज्ञा कहियें, ते प्रज्ञावंत साधु, घणा श्रुतनो जाण छतां में जवांतरने विषे रूडी रीतें ज्ञान आराधन कर्युं छे, माटें हुं समस्त मनुष्योमां जाण छुं, सर्वना पूछेला प्रश्नोना उत्तर हुं आपुं छुं ! एवो गर्व न करे, अने प्रज्ञाने अज्ञावें मनमां उद्वेग पण न करे, ते जेम के? हुं मूर्ख छुं, कांइ पण जाणतो नथी, सर्वने पराजवनुं स्थानक छुं, कोइयें पूछयां थकां जीवादि पदार्थनां नाम पण जाणतो नथी? एवी दीनता मनमां न करे, परंतु पूर्वकृत कर्मनुं स्वरूप चिंतवे, तो परिसह पीडे नहिं.

२१ (अन्नाण के०) अज्ञानपरिसह. ते पूर्वोक्त प्रज्ञानी पेरें अज्ञान पण सहन करवुं, माटें प्रज्ञा पछी एकवीशमो अज्ञानपरिसह गण्यो छे. वस्तुनुं तत्त्व, श्रुतज्ञानें जणाय छे, तेनो जे अ

ज्ञाव ते अज्ञानपरिसह कहियें. ते आवी रीतें छेः– के साधु मनमां एम न जाणे, जे में अव्र तिपणुं त्यागीने व्रतिपणुं अंगीकार कीधुं छे, तो पण हुं पण कांइ जाणतो नथी, तेमज में नइ महा नद्रादिक तप पडिवज्यां तथा उपधान जे आयंबि ल प्रमुख अने मासिकादिक प्रतिमा वही, एवी रीतें क्रियायें हुं चालुं छुं, तो पण हुं सारुं मारुं कांइ जाणतो नथी. केम के? हुं आगम ज्ञानरहित छुं, माटें निरक्षर कुक्षिंनर एवा मुने धिक्कार छे? एवी दीनता न करे, परंतु निःकेवल ज्ञाना वरणीय कर्मना उदयथी म्हारुं आ स्वरूप छे, ते यावत् नोगववाथी दूर थशे, अथवा तप अ नुष्ठानथी दूर थशे. तेमज जो एकादशांगादि नो पाठी होय तो पण हुं ज्ञाननो समुद्र छुं, एवो गर्व न करे, अहींयां प्रज्ञापरिसह अने अ ज्ञानपरिसहनुं एटलुं विशेष छे, के प्रज्ञापरिसह तो बीजो कोइ प्रश्नादिक पूछे, तेवारें थाय छे अने अज्ञानपरिसह तो मत्यादिक ज्ञान महा

रामां पूर्ण नथी, एम विचारवाथी थाय छे, अथवा शास्त्रनुं स्फुरवुं, तेने प्रज्ञा कहे छे, अने त्रिकाल विषयिक वस्तुना अजाणपणाने अज्ञान कहे छे.

२२ (सम्मत्तं के०) सम्मक्त्वपरिसह, ते पूर्वोक्त अज्ञाननें लीधे सम्यक्त्वदर्शनने विषे शंका थाय, माटें अज्ञान पछी बावीशमो सम्यक्त्व परिसह गण्यो छे. तिहां शास्त्रमां सूक्ष्म विचार सांजली तेने विषे असद्दहणा करवी नहिं, तथा देव, गुरु अने धर्म, तेने विषे असद्दहणा करवी नहिं, अथवा शास्त्रमां देवता अने इंद्रादिक सम्यग्दृष्टि छे, एवुं सांजलीयें छैयें, तो पण कोइ सान्निध्यकारी थतो नथी, माटे शुं जाणीयें देवता अने इंद्र छे, किं वा नथी? एवी असद्दहणा करवी नहीं, तथा अन्यदर्शनीयोनी ऋद्धि वृद्ध्यादिक उन्नति तथा तपश्चर्यादिक कष्ट प्रमुख देखीने मूढदृष्टि थावुं नहीं, तेने सम्यक्त्वपरिसह कहीयें, (इअ के०) ए प्रकारें (बावीस

के०) बावीश (परीसहा के०) परिसह जाण वा. अहीयां परिसह शब्द सर्वत्र जोडवो ॥२७॥

ए बावीश परिसह मांहेलो कयो परिसह कया कर्मना उदयथी थाय छे? ते कहे छे. मोह नीय कर्मना बे नेद छे. एक दर्शनमोहनीय, बीजुं चारित्रमोहनीय. तेमां मिथ्यात्वादिक त्रिक जे द र्शनमोहनीय छे, तेना उदयथकी सम्यक्त्व परि सहनो सद्भाव थाय छे, अने प्रज्ञा तथा अज्ञान ए बे परिसह तो ज्ञानावरणीय कर्मना उदयथी थाय छे. तथा अंतरायकर्ममां लाजांतराय कर्मना उदयथी अलाज परिसह थाय छे. एवं चार थइ.

हवे सात परिसह चारित्र मोहनीयना उद यथी थाय छे, ते कहे छेः—प्रथम क्रोधना उदय थी आक्रोशपरिसह थाय छे, बीजो अरति मोह नीयना उदयथी अरतिपरिसह थाय छे, त्रीजो पुरुषवेदना उदयथी स्त्रीपरिसह थाय छे, चोथो जयमोहनीयना उदयथी नैषेधिकी परिसह थाय छे. पांचमो जुगुप्सामोहनीयना उदयथी अचेलक

परिसह थाय छे, छठो मानमोहनीयना उदय थी याचनापरिसह थाय छे, सातमो लोभमोहनीयना उदयथी सत्कार पुरुषकार परिसह थाय छे. तथा १ क्षुधा, २ पिपासा, ३ शीत, ४ उष्ण, ५ दंश, ६ चर्या, ७ शय्या, ८ मल, ए वध, १० रोग, ११ तृणस्पर्श, ए अगीयार परिसह, वेदनीयकर्मना उदयथी थाय छे, शेष कर्मोने विषे परिसहनो अवतार नथी. एवं बावीश थइ.

हवे चौद गुणगणाने विषे परिसहोने समव तारी देखाडे छे, तिहां ए क्षुधादिक बावीशे परि सह यावत् बादर संपरायनामा नवमा गुणग णा सुधी थाय छे, अने सूक्ष्मसंपराय नामा दश मे गुणगणे तो पूर्वोक्त चारित्रमोहनीयना क्षयो पशमना प्रतिबंधथी तथा सात परिसह तथा एक दर्शनमोहनीयें प्रतिबद्ध मलीने आठ परि सह न थाय, शेष क्षुधादिक अनुक्रमें पांच परि सह, ६ चर्या, ७ शय्या, ८ वध, ए अलाभ, १० रोग, ११ तृणस्पर्श, १२ मल, १३ प्रज्ञा, १४

अज्ञान, ए चौद थाय छे. तथा अगीयारमा उप शांतमोह अने बारमा क्षीणमोह गुणठाणे पण पूर्वोक्त चौद परिसहज थाय छे. हवे तेरमे सयोगी अने चौदमे अयोगी ए बे गुणठाणें तो अनुक्रमें क्षुधादिक पांच, ६ चर्या, ७ वध, ८ मल, ए शय्या, १० रोग, ११ तृणस्पर्श. ए अगीयार प रिसह मात्र वेदनीय कर्मना प्रतिबन्धथी थाय छे.

ए बावीश परिसहमांहेली शीत अने उष्ण तथा चर्या (चालवुं) अने निषिद्या (रहेवुं) ए, चारे समकालें वर्त्ते नहिं, परंतु एना प्रतिपक्षी बे परिसह समकालें वर्त्ते, माटें उत्कृष्टथी एक प्रा णीने विषे समकालें वीश परिसहनो उदय थाय, अने जघन्यथी तो शीत अथवा उष्ण तथा चर्या, अथवा निषिद्या, ए चार मांहेला एकनोज उदय थाय, केम के ज्यां शीत होय, त्यां उष्ण न होय अने ज्यां चर्या होय त्यां निषिद्या न होय इत्यादिक मांहेलो एक थकां बेनो अभाव होय. ए परिसह मांहेला एक स्त्री, बीजो प्रज्ञा, त्रीजो

सत्कार, ए त्रण परिसह, अनुकूल जाणवा. अने शेष उंगणीश परिसह प्रतिकूल जाणवा. वली स्त्री तथा सत्कार, ए बे नाव शीतलपरिसह ले, अने शेष परिसह उष्ण ले. इति परिसहविचार संपूर्ण॥

हवे दश प्रकारें यतिधर्मनुं वर्णन करे ले.

खंती मद्दव अज्जव, मुत्ती तव संज
मे अ बोधवे ॥ सच्चं सोअं आकिं,
चणं च बंनं च जइधम्मो ॥ ११ ॥

अर्थः— क्रोधनो जे अनाव, ते पहेलो (खंती के०) क्षमाधर्म. माननो जे त्याग ते बीजो (मद्दव के०) मार्दवधर्म. मायानो जे त्याग एटले कपटरहितपणुं ते त्रीजो (अज्जव के०) आर्यव धर्म. निर्लोनता ते चोथो (मुत्ती के०) मुक्ति धर्म. इच्छानो जे निरोध, ते पांचमो (तव के०) तपोधर्म. प्राणातिपातादिक पांचनुं जे विरमण, तथा पांच इंद्रियोनो निग्रह, चार कषायनो जय, अने त्रण दंमनी निवृत्ति. ए सत्तर नेदें लगो

(संजमे के०) संयमधर्म. सत्यभाषण करवुं, ते सातमो (सच्चं के०) सत्यधर्म. तथा शरीरना हाथ पग प्रमुख पवित्र राखवा अने भातपाणी प्रमुख बहेंतालीश दोष रहित आहार लेवो, ते सर्व द्रव्यथी शौच अने आत्माना जे शुद्ध अध्यवसाय कषायादिकें रहित शुद्ध परिणामनी वृद्धि, ते भावशौच. अथवा मन, वचन, अनें कायाने शुद्ध राखवां संयमने विषे निरतिचार पणुं तथा जीव अदत्त, स्वामी अदत्त, गुरु अ दत्त अने तीर्थंकर अदत्त, ए चार प्रकारनी चो. रीनो त्याग करवो, ते आठमो (सोअं के०) शौ चधर्म. समस्त परिग्रह त्यागरूप मूर्छारहित थवुं, ते नवमो (आकिंचणं के०) आकिंचन धर्म. नव प्रकारें औदारिक, अने नवप्रकारें वैक्रियसंबंधी मैथुननो जे त्याग करवो, ते दशमो (बंभं के०) ब्रह्मचर्य धर्म. एवी रीतें (जइधम्मो के०) यतिनो धर्म ते कहेला दश प्रकारनो (बोधवे के०) जाणवो. ए दशगुण सहित होय, ते यति जाणवो. आ

आर्यामां त्रण चकार छे, ते पादपूर्णार्थे तथा उ
नयान्वयी अव्यय छे ॥ २ए ॥

हवे बार नावनानुं वर्णन करे छेः–

पढम मणिच्च मसरणं, संसारो एग
या य अणत्तं॥ असुइत्तं आसव सं,
वरो अ तह णिज्जरा नवमी ॥ ३० ॥

अर्थः–लक्ष्मी, यौवन, कुटुंब, परिवार, तथा आउखा प्रमुखने विषे जे अनित्यतानी नावना करवी, एटले संसारना सर्व पदार्थ ते कुशाग्रस्थ जलबिंदुनी परें अनित्य अस्थिर जाणे, ते (पढमं के०) प्रथम (अणिच्चं के०) अनित्य नावना. मरण आव्याना समयें चक्रवर्त्ती, इंद्र, अथवा तीर्थंकर प्रमुख गमे तेवो महोटो पुरुष होय, तेने पण धन कुटुंबादिक कोइनुं शरण मलतुं नथी, संसारमांहे जन्म, जरा अने मरणना नयथी राखवाने एक धर्म विना बीजुं कोइ शरण नथी, एवी जे नावना करवी, ते बीजी

(असरणं के०) अशरण नावना. माता ते स्त्री थाय, स्त्री ते माता थाय, पिता ते पुत्र थाय, पुत्र ते पिता थाय, इत्यादिक आ जीवें संसारनेविषे सर्व नावनो अनुनव कर्यो ठे, एवी जे नावना करवी, ते त्रीजी (संसारो के०) संसारनावना. आ जीव संसारमां एकलो आव्यो ठे, एकलो जशे अने एकलो सुख तथा दुःख नोगवशे, परंतु कोइ साथी थवानो नथी? एवी जे नावना करवी, ते चोथी (एगया के०) एकता नावना. आत्मा ज्ञानस्वरूप ठे, अने शरीर जड ठे. माटें परस्पर निन्न ठें, आत्मा ते शरीर नथी ने शरीर ते आत्मा नथी, आत्माथी शरीर अन्य ठे, तेमज धन तथा स्वजनादिक पण अन्य ठे, एवी जे नावना करवी, ते पांचमी (अन्नत्तं के०) अन्यत्वनावना. रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, वीर्य, परु, तथा आंतरडां इत्यादिक अमेध्य वस्तुउथी शरीर नरेलुं ठे. अने जेनां नवे द्वारो सदा घरनी खालनी पठें वहेतां रहे ठे. ए शरीर कोइ कालें पण पवित्र होतुं

नथी, एवी जे नावना करवी, ते छठी (असु इत्तं के०) अशुचित्वनावना. मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय तथा योग, ए पांच प्रकारना आश्रवें करीने कर्म बंधाय छे. अथवा दया दानादिकें करी शुनकर्म बंधाय छे, अने विषय कषायादिकें करी अशुन कर्म बंधाय छे, एवी जे नावना करवी, ते सातमी (आसव के०) आश्रवनावना. जे जे संवरथकी जे जे आश्रव रोकाय, ते ते आश्रवनुं रोकवुं, अने ते ते संवरनुं जे आदरवुं, एटले जेम क्षमादिक संवरवडे क्रोधादिक आश्रव रोकाय छे,इत्यादिक जे नावना करवी,ते आठमी(संवरो के०)संवर नावना(तह के०) तेमज संकीर्ण स्थानकने योगें जेम आम्र फल पक्व थाय छे, तेम बार प्रकारना तपें करीने कर्मने पचाववुं अर्थात् पूर्वें संचेला कर्मनुं साडवुं, ते रूप निर्ज्जरा, सकाम अने अकाम, ए बे नेदें छे, एवी जे नावना करवी, ते (नवमी के०) नवमी (णिज्जरा के०) निर्ज्जरानावना

जाणवी. आ गाथामां बे चकार छे ते पाद पू र्णार्थे तथा समुच्चयार्थी अव्यय छे ॥ ३० ॥

लोगसहावो बोही, उल्लहा धम्म स्स साहगा अरिहा ॥ एआउ जा वणाउ, जावेअवा पयत्तेणं ॥ ३१ ॥

अर्थः– कड उपर बे हाथ दइने तथा बन्ने पग पसारीने उजेला पुरुषना जेवो जेनो सम आकार षड् द्रव्यात्मक छे पूर्व पर्याय विणसे नवा पर्याय उत्पन्न थाय, अने द्रव्यपणे निश्चल होय, एम उत्पाद, व्यय, तथा ध्रौव्य स्वरूप चौदरा ज लोक छे. तेनुं नीचेनुं तलीयुं वंधा वालेला मल्लक सरखुं छे. तथा मध्यजाग जालर सरखो छे, अने उपरनो जाग मृदंग सरखो एवो शाश्वत छे. इत्या दिक जे लोक स्वरूपनी जावना करवी, ते दशमी (लोगसहावो के०) लोकस्वजावजावना जाण वी. जीवने संसारमां भ्रमण करतां अनंता पु द्गल परावर्त्त व्यतीत थया, तेमां अनंती वार च

ऋवर्त्यादिक जेवी ऋद्धि प्राप्त थइ, तथा यथा प्रवृत्तिकरणने योगें करी अकाम निर्जरावडे पु ण्यना प्रयोगथी मनुष्यजव, आर्यदेश, नीरोगी पणुं तथा धर्मश्रवणादिकनी प्राप्ति थई, तथापि सम्यक्त्व प्राप्त थवुं अति ङुर्लज बे, एवी जे जावना करवी, ते अगियारमी (बोही के०) बोधिङुर्लजजावना. अने जे ङुस्तर संसार समु ड्मांथी तारवाने प्रवह्ण समान ते श्रीजिनप्रणी त दशविध क्षमादिक शुद्धधर्म, तथा ज्ञान, दर्श न, चारित्र, ए रत्नत्रयात्मक धर्म, ते पामवो ङुर्लज बे. तथा ते धर्मना (साहगा के०) साधक (अ रिह्ा के०) अरिहंतादिक ते पण आ संसारने विषे पामवा (ङुल्लह्ा के०) ङुर्लज बे. एवुं जे चित वबुं, ते बारमी (धम्मस्स के०) धर्मनी जावना. ए रीतें सम्यग्दृष्टियें (पयत्तेणं के०) प्रयत्नेन एटले उद्यमें करीने (एआउ के०) ए कहेलीयो (जाव णाउ के०) बार जावनाउ तेने प्रमादरहित थईने शुद्ध मने करी (जावेअव्वा के०) जावितव्या एटले

जाववी तथा पांच महाव्रतमांहेली एकेका म हाव्रतनी पांच पांच जावना मलीने पच्चीश जा वना छे, ते पण एमां अंतर्जावें छे. तथा मैत्री, प्र मोद, कारुण्य अने उपेक्षा, ए चारनी साथें पूर्वोक्त बार जावना मेलवियें, तेवारें शोल जावना थाय छे. तेनो विचार उपाध्यायश्री विनयविजयजी कृत शांत सुधारसग्रंथथकी विस्तारें जाणवो ॥ ३१ ॥

हवे पांच प्रकारना चारित्रनुं वर्णन करे छेः—

सामाइ अब पढमं, छेउवठावणं ज
वे बीअं ॥ परिहार विसुद्धीअं, सु
हमं तह संपरायं च ॥ ३२ ॥

अर्थः— तेउमां (अब के०) इहां (पढमं के०) पहेलुं चारित्र (सामाइ के०) सामायिक छे, तेनो अर्थ करे छे. सम अने आयिक ए बें पदोनो एक सामायिक शब्द थयो छे. तिहां सम एटले राग द्वेष रहितपणाने माटें आय एटलें

गमन प्रायण छे, जिहां ते सम कहीयें, ते ज्यां उपन्युं ते सामायिक, तथा वली सम ते ज्ञान, दर्शन तथा चारित्र, तेनो आयिक जे लान, ज्यां थाय छे. एटले जेणें करी ज्ञान, दर्शन, तथा चारित्र, ए त्रणेनी प्राप्ति थाय छे, तेने सर्व सावद्ययोग त्यागरूप, अने निरवद्ययोग सेवनरूप सामायिक कहियें. ते श्रावकने देशविरतिरूप सामायिक अने साधुने सर्वसावद्यविरतिरूप सामायिक होय, तेना बे नेद छे. तेमां नरत ऐरवतादि दश क्षेत्रने विषे पहेला तथा छेला जिनना वारामां सर्वविरतिसामायिक दंमकनो उच्चार करावे, ते इत्वरिक उगामण कस्या सुधी जे रहे, ते इत्वरिक एटले स्वल्पकालनावी सामायिक कहियें, अने वचला बावीश जिनोना वारामां तथा माहाविदेहक्षेत्रमां यावत्कथिक एटले सामायिक उच्चस्था पछी निरतिचारज पाले छे, तेथी तेने उगामण नहिं होवाने लीधे जाव जीव लगें रहे, माटें यावत्कथिक चारित्र कहियें.

एने सम्यक्चारित्र पण कहे छे. ए सामायिक चारित्र जीवने प्राप्त थया विना बीजां चारित्रो नो लाभ थाय नहिं, माटें एने आदिमां कह्युं छे.

(बीअं के०) बीजुं (छेउवठावणं के०) छेदोपस्थापनं एटले छेदोपस्थापनीय चारित्र (भवे के०) भवेत् एटले छे, ते पूर्वोक्त सर्वविरति सामायिक चारित्रनेज छेदादि विशेषपणे विशेषीयें, तेवारें शब्दथी तथा अर्थथी नानाप्रकारपणुं भजे, तेवारें छेदोपस्थापनीय चारित्र थाय. तिहां छेद एटले पूर्वपर्यायनो छेद करवो, अने उपस्थापन एटले गणाधिपें आपेलुं पंच महाव्रतरूप पणुं जे महाव्रतने विषे होय, ते छेदोपस्थापनीय कहियें, एटले ज्यां नवा पर्यायोनुं स्थापन करवुं, तथा पंच महाव्रतनो उच्चार कराववो. ते पण बे भेदें. एक सातिचार ते मूलगुण घातीने प्रायश्चित्तरूप अने बीजो निरतिचार, ते इत्वर सामायिकवंत नवदीक्षित शिष्यने छज्जीवणीया अध्ययन भण्या पछी होय, तथा बीजो तीर्थ आ

अथी ते जेम श्री पार्श्वनाथना तीर्थथी वर्द्धमान स्वामीना तीर्थें आवी चार माहाव्रतरूप धर्म त्या गीने पंचमहाव्रतरूप धर्म आदरे, तेने होय,

त्रीजो (परिहारविसुद्धीअं के०) परिहार वि शुद्धि चारित्रना पर्याय कहियें छेयें. तिहां (परिहा र के०) तपोविशेष, तेणें करी विशुद्धि एटले कर्म नी निर्जरा, जे चारित्रने विषें होय, तेने परिहार वैशुद्धिक चारित्र कहियें, ते बे नेदें छे, तेमां पहेलुं जे चार जण विवक्षित चारित्रना आसे वक ए कल्पमां प्रवर्त्तता होय, तेनुं चारित्र ते निर्विषमानसिक परिहारवैशुद्धिक चारित्र जाणवुं. अने बीजुं जे चार जन तेना अनुचारी होय, तेने निर्विष्टकायिक परिहार वैशुद्धिक चारित्र जाणवुं, ते आवी रीतेंः– नव जणानो गच्छ जूदो निकले, ते तिर्थंकर पासें अथवा, पूर्वें जेणें तीर्थंकरपासेंथी ए चारित्र पडिवज्युं होय, तेनी पासें ए चारित्र पडिवज्जे. हवे ते नव साधुमां चार जण परिहारक एटले तपना कर

नारा थाय, ते निर्विष मानसिक जाणवा, अने चार तेना वैयावच्चना करनारा थाय, ते निर्विष्टकायिक जाणवा. तथा एकने वाचनाचार्य गुरुस्थानकें ठेरावे. पछी ते चार परिहारक छ मास सुधि तप करे, तेमां उष्णकालें जघन्यथी चोथ मध्यमथी छठ अने उत्कृष्टथी अठम, एवुं तप करे, अने शीतकालें जघन्यथी छठ मध्यमथी अठम, अने उत्कृष्टथी दशम करे, तथा वर्षाकालें जघन्यथी अठम, मध्यमथी दशम अने उत्कृष्टथी डुवालस तप करे, पारणे आंबील कल्पस्थितपणे नित्य करे. एम छ महिना तप करे, ते पछी फरी चार तपस्याना करनार, ते वैयावच्चीया थाय, अने वैयावच्च करनारा तपिया थाय, ते पण छ मास लगें तप करे, ते पूर्ण थया पछी जे गुरु थया होय, ते छ महिना तप करे, तेवारें ते आठ मां हेलो एक गुरु थाय, शेष बीजा वैयावच्च करे. एम अढार महिना सुधी तप संपूर्ण करी, पछी जिनकल्प आदरे, अथवा गछमां पण आवे.

तप जे प्रथम संघयणी, पूर्वधर लब्धिवंत होय ते प्रचुरकर्मना परिपाकने अर्थे अंगीकार करे, ए चारित्र, पांच भरत, पांच ऐरवतमां पहेला अने छेल्ला तीर्थंकरना तीर्थमां होय. ए परिहारविशुद्धि चारित्रनो संक्षेपथी विचार कह्यो.

(तह के०) तेमज चोथो (सुहुमं के०) सूक्ष्म छे, (संपरायं के०) कषाय जिहां तेने सूक्ष्मसंपरायचारित्र कहीयें, ते उपशमश्रेणियें कर्म उपशमावतां अथवा क्षपकश्रेणियें कर्म खपावतां होय, तिहां नवमे गुणठाणें लोभना संख्याता खंड करी तेने उपशमश्रेणिवालो जे होय, ते उपशमावे, तथा क्षपकश्रेणिवालो होय, ते खपावे, ते संख्याता खंड मांहेलो जेवारें छेल्लो एक खंड रहे, तेना असंख्याता सूक्ष्म खंड करीने, दशमे गुणठाणे उपशमावे, अथवा क्षपक होय, ते खपावे, ते दशमा गुणठाणानुं नाम सूक्ष्मसंपराय, अने चारित्रनुं नाम पण सूक्ष्मसंपराय जाणवुं. ए चारित्र बे भेदें छे, एक

श्रेणि चढताने विशुद्धमानसिक होय, बीजो उ पशमश्रेणिथी पडताने संक्लिष्टमानसिक जाणवुं. औपशमिकने ए चारित्र आखा संसारमां पांच वार अने एक नवमां बे वार आवे ॥ ३२ ॥

तत्तोअ अहक्खायं, खायं सवंमि जी
वलोगंमि ॥ जं चरिऊण सुविहि
आ, वच्चंति अयरामरं ठाणं ॥ ३३ ॥

अर्थः— (तत्तो के०) तेवार पछी पांचमुं (अहक्खायं के०) यथाख्यात चारित्र, ते ज्यां (यथा के०) यथाविधें करीने अकषायपणुं अर्थात् ज्यां संज्वलनादिकें करी सर्वथा रहित पणुं (ख्यात के०) कहीयें, ते यथाख्यात चा रित्र जाणवुं. तेना बे नेद छे. एक छाद्मस्थि क अने बीजुं कैवलिक, तिहां छाद्मस्थिक ते छद्मस्थ औपशमिकने अगीयारमे गुणठाणे होय, अने क्षपकने बारमे गुणठाणे होय, बीजो जे के वलीने तेरमे अने चउदमे गुणठाणे होय, ते के

वलिक जाणवुं. ए चारित्र (सवंमि के०) समस्त एवा (जीवलोगंमि के०) जीव लोकनेविषे केहवुं छे ? तो के (खायं के०) ख्यात एटले प्रसिद्ध छे. हवे ते केवीरीतें प्रसिद्ध छे ? ते कहे छे, (जं के०) जे चारित्रप्रत्यें (चरिऊण के०) आचरीने (सुविहिआ के०) सुविहित साधु ते (अयरामरंगाणं के०) अजरामर स्थानकप्रत्यें (वच्चंति के०) पामे छे, एटले जन्म, जरा अने मरण तेणें रहित एवुं जे मोक्षरूप स्थानक, ते प्रत्यें पामे छे ॥ ३३ ॥

॥ इतिश्री संवरतत्त्वविचारः समाप्तः ॥ ६ ॥

अथ निर्जरातत्त्वविचारः प्रारभ्यते ॥

बारसविहं तवो णि, ज्जराय बंधो चउ
विगप्पो अ॥ पयई ठिइ अणुभागो,
पएस भएहिं नायवो ॥ ३४ ॥

अर्थः— गाथाना पूर्वार्द्धमांना एक एक वाक्यें करी निर्जरातत्त्वनुं वर्णन करे छेः—निर्जरा बे प्र

कारें ठे. एक इव्यनिर्जरा, बीजी नावनिर्झरा, तथा अकाम अने सकाम एवा बे नेदें पण निर्जरा ठे, ते कहे ठेः—पुजलकर्मनुं जे साडवुं ते इव्यनिर्जरा अने आत्माना शुद्ध परिणामें करी कर्मनी स्थिति जे पोतानी मेले पाके, अथवा बार प्रकारना तपें करी नीरस कर्या एवा जे कर्मपरमाणु ते जे नाथी सडे, एवा जे आत्माना परिणाम थाय ते नावनिर्झरा जाणवी. तथा तिर्यंचादिकनी परें इडा विना कष्ट सहन करतां कर्म पुजलनुं जे क्षपन थाय ठे, तेने इव्यनिर्झरा अथवा अकामनिर्झरा कहियें; अने बार प्रकारना तपें करी संयमी थकां कष्ट सहन कर्याथी जे कर्म परमाणुउनुं क्षपण करवुं, अथवा साडवुं, तेने नावनिर्झरा अथवा सकामनिर्झरा कहियें. ए बन्ने निर्झरामां नावनिर्झरा अथवा सकामनिर्झरा श्रेष्ठ ठे, ते (णिझराय के०) (निर्झराय) निर्जरातत्त्व (बारसविहं के०) द्वादशविधं एटले बार प्रकारना (तवो के०) तप, तेना नेदें करी

कह्युं छे. एटले बार प्रकारनुं तप करवाथी अना दिसंबंध सर्वकर्मोनुं परिशाटन थाय छे, तेनेज सातमुं निर्जरातत्त्व कहे छे. अथवा (बारसवि हंतवोणिज्जराय के०) बार प्रकारनुं तप जे आ गली गाथायें कहेशे, ते तप, निर्जराने अर्थे छे.

हवे गाथाना पूर्वार्द्धमांना "बंधो" ए शब्दथी बंधतत्त्वनो आरंभ थाय छे, (बंधो के०) (बंधः) बंधतत्त्व एटले कर्मनुं बांधवुं ते (चउविगप्पो के०) चतुर्विकल्पः एटले चार भेदें छे, ते आ प्रमाणेंः— एक (पयई के०) (प्रकृतिः) प्रकृतिबंध ते कर्मनुं स्व भावपरिणमनरूप छे, बीजुं (ठिई के०) स्थिति ए टले स्थितिबंध, ते कर्मनुं काल परिमाणरूप छे. त्रीजुं (अणुभाग के०) अनुभागः एटले अनुभाग बंध, ते कर्मनुं तीव्रमंदादि रस परिमाणरूप छे अने चोथुं (पएस के०) प्रदेश एटले प्रदेशबंध ते कर्म पुद्गलना प्रदेशपरिमाणरूप छे. ए चार (भेएहिं के०) भेदैः एटले भेदोयें करीने बंधतत्त्वने सम्यक् दृष्टि जीवें (नायव्वो के०) ज्ञातव्यो एटले जाणवो ॥ ३४

हवे बार प्रकारना तपवडे कर्मोनी निर्जरा थाय छे, तेने निर्जरातत्त्व कहे छे. ते तपना बे भेद छे. एक बाह्य तप अने बीजुं अभ्यंतरतप ते मां प्रथम छ प्रकारना बाह्य तपनुं कथन करे छेः—

अणसण मूणोअरिया, वित्तीसंखे
वणं रसच्चाउ ॥ कायकिलेसो संली,
णया य बज्झो तवो होई ॥ ३५ ॥

अर्थः— पहेलुं (अणसण के०) अनशन. तप, ते आहारनुं त्याग करवुं, तेना बे भेद छेः— एक इत्वर, अने बीजो यावत्कथिक. तिहां छेल्ला तीर्थंकरने वारे छठ, अठमादिकथी मांडीने छ मासी पर्यंत, अनेक विधियें जे नियमयुक्त अ शननो त्याग करवो, ते इत्वर अनशन कहियें. अने यावत्कथिक ते जावजीव अनशन ग्रहण रूप तेना बे भेद छेः— एक पादोपगम, बीजुं भ त्तपच्चरकाण. ए बन्नेना वली निहारिम अने अ निहारिम, ए बे बे भेद छे, तिहां अनशन कीधा

पछी शरीरने बाहिर काहाडवुं पडे, ते निहारीम अने अनशन कीधा पछी तेहिज स्थानकें रहेवुं, परंतु शरीरने त्यांथी बाहेर काहाढवुं न पडे, गुफादिकमांहेज राखवुं पडे, ते अनिहारिम.

बीजुं (ऊणोअरिआ के०) ऊणोदरिका तप एटले न्यूनता करवी, तेना बे भेद छे. एक द्रव्यथी, बीजुं भावथी, तेउमांना द्रव्यऊणोदरीना बे भेद छे. एक उपकरणनी न्यूनता करवी. बीजुं भात पाणीनी न्यूनता करवी. तथा भावथी ऊणोदरी ते रागादिक क्रोधादिक अल्प करवा, एटले क्रोधादिकनी न्यूनता करवी.

त्रीजुं (वित्तीसंखेवणं के०) वृत्तिसंक्षेप तप तेना चार भेद छे. एक द्रव्यथी, बीजुं क्षेत्रथी, त्रीजुं कालथी, अने चोथुं भावथी. ए चार प्रकारें वृत्ति एटले आजीविका तेनो संक्षेप करवो, एटले अभिग्रह करवा नियमादिक धारवा.

चोथुं (रसच्चाउ के०) रसत्याग तप, ते नीवी

तथा आंबिल प्रमुखनुं करवुं, विगयादिक रस नो त्याग करवो.

पांचमुं (कायकिलेसो के०) कायक्लेशतप, ते लोचादिक कष्टनुं सहन करवुं, कायोत्सर्ग करवो, तथा उत्कटादिक आसननुं करवुं.

छठुं (संलीणया के०) संलीनता तप, एटले अंगोपांगादिकनुं संवरवुं, गोपन करवुं. तेना चार भेद छे. पहेलुं इंडियसंलीनता, बीजुं कषाय संलीनता, त्रीजुं योगसंलीनता, अने चोथुं विविक्तचर्यासंलीनता, एटले एकांतवस्तियें रहेवुं.

ए रीतें ए छ प्रकारनुं बाह्यतप, ते सर्वथी तथा देशथी एवा बें भेदें जाणवुं. जे कष्टनेमिथ्यात्वीयो पण तप करी माने छे, जेने लोक पण देखी शके छे, जेथी कष्ट घणुं ने लाभ अल्प थाय, अने बाह्य शरीरने तपावे, तेथी ए छ प्रकारनुं (बज्झो के०) बाह्य (तवो के०) तप (होई के०) छे ॥ ३५ ॥

छ प्रकारना अभ्यंतरतपनुं कथन करे छेः—

पायच्छित्तं विणउ, वेयावच्चं तहेव
सज्जाउ ॥ जाणं उस्सग्गो विअ,
अप्भिंतरउ तवो होई ॥ ३६ ॥

अर्थः— पहेलुं (पायच्छित्तं के०) प्रायश्चित्त तप एटले कीधेला अपराधनी शुद्धि करवी, कपटरहितपणे लागेला दोषने गुरु आगल प्रकाश करी तेनी गुरुमुखें आलोयणा लेवी. तेना दश नेद छे. मात्र गुरुनी आगल पोताना करेला अपराधनुं कथन करवुं, तथा गोचरी प्रमुखनुं जे आलोचवुं,ते पहेलुं आलोचन प्रायश्चित्त. पूज्याविना मातरुं प्रमुख परठववाथी मिच्छामि डुक्कड देवुं, ते बीजुं प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त. शब्दादिक विषय उपर रागादिक कस्वाथी तेनुं आलोचन करवुं, अने बीजुं मिच्छामि डुक्कड पण देवुं, एटले बन्ने वानां करवां, ते त्रीजुं मिश्रप्रायश्चित्त. अशुद्धमान जात पाणी प्रमुखनो जे त्याग करवो,

ते चोथुं विवेकप्रायश्चित्त. कुस्वप्नादिक दीगाथी का योत्सर्ग करवो, ते पांचमुं कायोत्सर्ग प्रायश्चित्त. पृथ्वीकाय प्रमुखनो संघट थवाथी नीवी प्रमुख जे छमासी पर्यंत तप करवुं, ते छठुं तप प्राय श्चित्त. पृथिविआदिकनो संघट्ट थवाथी कांइक दीक्षापर्यायनी न्यूनता थइ होय, ते अपराधनुं निवारण करवाने जे डुर्दम तप करवुं, ते सातमुं छेदप्रायश्चित्त. मूलगुण नंग थवाने ली धे सर्वथा व्रत पर्यायनुं छेदन थवाथी फरी जे महाव्रत लेवां, ते आठमुं मूल प्रायश्चित्त. अति संक्लिष्ट परिणामें करी कोईनो घातपात थई गयो होय, तो सूत्रोक्त विधियें करी तप करवुं, अने त्यार पछी फरी महाव्रतनो जे आरोप करवो, ते नवमुं अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त. साध्वी अथवा राजानी राणी प्रमुख स्त्रीने विषे संनोग थइ गया थी बार वर्ष पर्यंत क्रिया सहित अने लिंगादिक नेदें रहित तीर्थप्रनावना करी, फरी दीक्षा ल इने जे गछमां आववुं, ते दशमो पारांचित प्रा

यश्चित्त. ए दश प्रकारें प्रायश्चित्त तप कह्युं.

बीजुं (विणउ के०) विनयतप, एटले गुण वंतादिकनी नक्ति करवी, तथा आशातना टाल वी, इत्यादिक एना सात नेद छे.

तेमां प्रथम ज्ञाननो विनय,पांच नेदें छे. त्यां मत्यादि पांच प्रकारना ज्ञाननी बाह्यथी सेवा क रवी, ते पहेलो नक्तिविनय. पांचे ज्ञाननुं अंतरं ग प्रीति सहित बहुमान करवुं, ते बीजो बहुमान विनय पांचे ज्ञानें करी दीठेला जाणेला पदार्थो नी सम्यक् प्रकारें जे अनुनवथी नावना करवी, ते त्रीजो नावनाविनय. पांचे ज्ञाननुं विधियें करी ग्रहण करवुं, ते चोथो विधिग्रहणविनय. अने पांचे ज्ञाननो जे अन्यास करवो, ते पांचमो अन्यासविनय.

बीजो दर्शननो विनय बे नेदें छे. पहेलो शुश्रू षाविनय एटले उचित क्रियानुं साचववुं. बीजो अनाशातनाविनय, एटले अनुचित क्रियाथी निवृत्तवुं; अथवा आशातना करवी नहीं. एवी

रीतें दर्शननो विनय बे प्रकारें छे. ए बे प्रकारनो विनय कोने विषे करवो ? ते कहे छे. जे साधु अथवा साधर्मी पोताथी दर्शनगुणें करी अधिक होय, तेनेविषे शुश्रूषा विनय करवो. ते शुश्रूषानुं स्वरूप अनेक प्रकारें छे, ते कहे छे १ सत्कार एटले स्तवन तथा वंदनादिक करवां, २ अभ्युत्थान एटले आसनथी उठवुं; ३ सन्मान एटले वस्त्र तथा पात्रादिकें करी पूजा करवी. ४ आसनपरिग्रहण एटले अति आदरें करी आसन लावी, आपीने स्वामी ! आ आसन उपर बेसो. एम मुखथी कहेवुं. तेमज ५ आसननुं प्रदान एटले मात्र मुखथकी कहेवुं एटलुंज नहिं, पण ते प्रमाणें आसन देवुं. ६ कृतिकर्म एटले वंदना करवी, ए साधु प्रमुखनी अपेक्षायें जाणवुं. ७ अंजलिग्रहण एटले हाथ जोडवा, ८ आवतानी सामे जवुं. तेमज ए बेठेलाने (पर्युपासना) सेवा करवी. १० जनाराने वोलाववा जवुं. ए दश प्रकारें शुश्रूषारूप पहेलो विनय थाय छे.

बीजा अनाशातना विनयना पिस्तालीश नेद बे, ते कहे बेः— १ रुषनादिक चोवीश तीर्थंकर, तथा २ जिनप्ररूपित धर्म, ३ धर्माचार्य अथवा प्रव्रजाचार्य. ४ व्याख्यान करनार, वांचनाना दातार वाचक, ५ वय, पर्याय तथा श्रुत, ए त्रण प्रकारना थिविर, ६ कुल, ते चांडादिक एक आचार्यनी संतति, ७ गण, ते पोत पोतामां सापेक्ष कुलनो समुदाय कोटिकादिक. ८ संघ, ते ज्ञानादिक गुणसहित साधु समुदाय, अथवा गणसमुदाय रूप तेने विषे ए सांनोगिक, ते एक मांमलीमां जे साथें व्यवहार होय ते. १० क्रियामां जे पोताना सरखी क्रियावाला होय ते. एमनी साथें मतिज्ञानादिक पांच ज्ञान मेलवतां पंदर थया. तेने विषे १ आशातनानो त्याग करवो, तेमज २ नक्ति सहित बहुमान करवुं, तथा ३ बता गुण वर्णवीने यशः कीर्त्ति दीपाववी. एवी रीतें पूर्वोक्त पन्नरने ए त्रणे गुणतां अनाशातना विनयना पिस्तालीश नेद थाय बे. ए अनाशातनारूप बीजो विनय कह्यो.

त्रीजो चारित्रनो विनय, पांच भेदें छे, ते कहे छेः—सामायिक प्रमुख पांच चारित्रोनी सद्दहणा करवी, तेमज कायायें करी फरसवुं, आदरवुं, पालवुं. तेमज भव्य प्राणीनी आगळ प्ररूपणा करवी.

त्रण प्रकारना योगनो विनय कहे छेः—आचार्यादिकोनो सर्व काळने विषे मन, वचन, तथा कायायें करी विनय करवो. एटले मनें करी मातुं चिंतववुं नहीं, वचनें करी मातुं बोलवुं नहीं, तथा कायायें करी माठी प्रवृत्ति करवी नहिं. तेवी रीतेंज ते आचार्यादिकने विषे मन, वचन अने कायाने शुभ प्रवृत्तिमां उदीरवां प्रवर्त्तावां. ए रीतें त्रण प्रकारें योगनो विनय ते पूर्वोक्त त्रण विनयनी साथें भेळतां छ भेद विनयना थया.

सातमो लोकोपचार विनय सात भेदें छे. ते कहे छेः—१ गुरु प्रमुख जे श्रेष्ठ पुरुष होय तेउनी समीपें वसवुं; २ आराधवा योग्य पुरुषनी इच्छायें प्रवर्त्तवुं, ३ पोतानी उपर उपकार करे, तेनी उपर पाछो प्रत्युपकार करवो, एटले गुरुवे जो हुं

विनयें करी प्रसन्न करीश, तो ते मनें शास्त्रदान देशे, एवा अनिप्रायें करी गुरुने नात पाणी प्रमुख लावी देवुं, ४ तेमज ज्ञानादिक जे कार्य, तेनुं कारण जे नात पाणी प्रमुख, तेनुं करवुं, एटले देवुं, ५ तथा डुःखें करी पीडायेला जें ग्लान तेनी औषधादिकें करी गवेषणा करवी, ६ तेमज देश तथा कालनुं जाणवुं, जे अवसरें जे उचित होय, ते अवसरें ते करवुं, ७ वडिलो संबंधी सर्वकार्योने विषे अनुकूलपणुं एटले तेमना कार्य करवामां उजमालपणुं राखवुं. इति नावः एवी रीतें लोकोपचार विनय सात प्रकारें छे. एम विनयना सात नेदें करी बीजुं विनयतप जाणवुं. यद्यपि विनय तो एकज छे, तथापि ज्ञान, दर्शन, चारित्र, मन, वचन, काया अने लोकोपचार, ए सात विषयें करी विनय करियें, तेथी ए बीजुं विनयतप पण सात प्रकारनुं कह्युं छे.

त्रीजुं (वेयावच्चं के०) वैयावृत्य तप एटले नात, पाणी प्रमुख संपादवारूप उपष्टंन देयें,

ते दश भेदें छे. यथाः— "आयरिय उवज्झाए, थेर तवस्सी गिलाण सेहाण ॥ साहम्मी कुल गण सं, घ वेयावच्चं हवइ दसहा ॥ १ ॥ आचार्य, ते जेनी पासेंथी धर्मप्राप्त थाय छे ते. उपाध्याय, ते जे विद्या अभ्यास करावे छे ते. स्थविर, ते ज्ञान, प र्याय, तथा वय, ए त्रण प्रकारें. तपस्वी, ते अ ' , ,मुख तप करनार होय ते. गिलाण, ते ग्लान एटले रोगी होय ते. सेहाण, ते शिष्य नवी दीक्षा लीधेलो होय ते. साहम्मी, ते समानधर्मवान् होय ते. कुल, ते चंद्रादिक कुलवान् होय ते. गण, ते कोटिक प्रमुख. संघ, ते समुदाय रूप होय ते. एवी रीतें ए दशनी अशन, पान, वस्त्र, पात्र, तथा औष ध प्रमुखें करी यथायोग्य सेवा करवी, तेने त्रीजुं वैय्यावृत्त्य तप कहे छे.

(तहेव के०) तथैव एटले तेमज चोथुं (स ज्झाउ के०) स्वाध्याय ए नामनुं तप, ते पांच भेदें छे. यथा "वायणा पुच्छणा चेव, तहा य परि

अट्टणा; अणुप्पेहा धम्मकहा, सज्झाउ होइ पं चहा" (वायणा के०) वांचना, ते पोतें भ णवुं, शिष्यादिकने भणाववुं, तथा वांचवुं. पृ छना, ते जे सूत्रार्थमां संदेह पड्याथी गुर्वादिकने पूछवुं, ते. (तहाय के०) तेवी रीतेंज (परिअ ट्टणा के०) परिवर्त्तना, ते पूर्वें शीखेलो जे अर्थ तेने फरी संजारवो ते. अनुप्रेक्षा, ते पूर्वें [illegible] अर्थनुं चिंतवन करवुं ते. (धम्मकहा के०) धर्म संबंधी कथा कहेवी अथवा धर्मोपदेश करवो ते. ए प्रकारें स्वाध्यायतप पांच भेदें थाय छे,ते कह्युं.

पांचमुं (झाणं के०) ध्यान ते मननुं जे ए काग्रतायें अवलंबन ते ध्यानतप, ते चार भेदें छे.

तेमां पहेलुं आर्त्तध्यान, एना वली चार भेद छेः– भ्राता, मित्र, स्वजन, माता, पिता, सु हृद्, भृत्य, तथा पशु प्रमुख जे पोताने इष्ट एटले अतिप्रिय होय, तथा शातावेदनीय तेउनो वि योग थयाथी जे चिंता, शोक, अथवा विलाप क रवो, ते पहेलुं इष्टवियोग आर्त्तध्यान. मनने

अणगमता जे विषय, अने तेना आधारभूत जे रासन्न कोढी प्रमुख अशुजनो संयोग थयाथी ते तेनेविषे द्वेषें करी जे वियोगनुं चिंतवन करवुं. ते बीजुं अनिष्टसंयोग आर्त्तध्यान. शरीरने विषे कोइ रोगनी उत्पत्ति थयाथी तद्विषयिक जे चिंतादिकनुं करवुं, ते त्रीजुं रोगचिंता आर्त्तध्यान. अमुक समय आव्याथी हुं आ कार्य करीश ? इत्यादिक नविष्यकालने विषे जे शोचना करवी, तथा दान, शील, तप प्रमुखें करीने पछी तेना फलनी जे इछा करवी, अथवा आ नवने विषे में एवां उग्र तप कर्यां छे, माटें आवता नवमां मने अमुक वस्तुनी प्राप्ति थजो, एवुं जे नियाणुं बांधवुं, ते चोथुं अग्रशौच आर्त्तध्यान कहियें.

बीजुं "रौद्र" ए नामनुं ध्यान. तेना चार नेद छेः— द्वेषें करी प्राणीने मारवानी अथवा बंधनादिक करवानी जे चिंतवना करवी, ते पहेलुं हिंसानुबंधी रौद्रध्यान. पैशून्यादिक असत्य असनूत वचन बोलवाना तथा छलादिक करवाना

जे अध्यवसाय, ते बीजुं मृषानुबंधी रौद्रध्यान. क्रोध तथा लोभादिकने वश थइने बीजानुं द्रव्य हरण करवानी जे चिंतवना करवी, ते त्रीजुं स्ते यानुबंधी रौद्रध्यान. शब्दादिक विषयनुं साधन भूत जे धन, तेना रक्षण करवाने अर्थे सर्व स्वसं बंधीयोने विषे जे दुष्ट चिंतवन करवुं. ते जेम के? जो आ सर्व जीवतां हशे, तो मारुं धन लइ लेशे, माटें जो ते मरी जाय, तो सारुं थाय? एवी जे दुष्ट चिंतवना करवी, ते चोथुं संरक्षणानुबंधी रौद्रध्यान कहियें. ए आर्त्त अने रौद्र बेहु ध्यान संसारसंबंधी फलनां देनारां छे.

त्रीजा धर्मध्यानना चार भेद छेः— ज्ञान, द र्शन, चारित्र, तथा वैराग्यभावनायें करी वीत रागना वचन उपर जे सद्दहणा, एटले श्रद्धान राखवुं. आपणी मति तुच्छ छे पण केवलिभा षित सर्व सत्यज छे, एवी जे चिंतवना करवी, ते पहेलुं आज्ञाविचय धर्मध्यान. राग द्वेषादिक जे आश्रव छे, ते इहलोक परलोकनेविषे अपाय

ज्रूत एटले अनर्थरूप ठे, एवी जे चिंतवना क
रवी, ते बीजुं अपायविचय धर्मध्यान. सुखडुःखा
दिकनो विपाक आवी प्राप्त थयाथी तेनो हर्ष शोक
न करतां तेने मात्र पूर्वकृत कर्मनुं फल जाणवुं,
ते त्रीजुं विपाकविचय धर्मध्यान. जिनोक्त षड्
ड्रव्यनां लक्षण संस्थानादिकनी जे चिंतवना
करवी,ते चोथुं संस्थानविचय धर्मध्यान कहियें.

चोथा शुक्लध्यानना चार ज्रेद ठेः– प्रत्येक
ड्रव्यनेविषे उत्पादादि पर्यायना ज्रेदपणानुं चिंत
वन करवुं, शब्दथी शब्दांतरें तथा अर्थथी अर्था
तरें अने ड्रव्यथी ड्रव्यांतरें संक्रमण करवुं, तथा
एक योगथी बीजा योगने विषे एटले मनोयोग
थी वचनयोगने विषे, वचनयोगथी काययोगने
विषे संक्रमण करवुं, इत्यादिक ते पहेलुं पृथक्त्व
वितर्क सविचार शुक्लध्यान. ए ध्यान, ज्रांगिक श्रु
तपाठीने त्रणे योग ठतां थाय ठे, ए प्रथम ज्रेद.

२ उत्पादादिक एक पर्यायें करी निर्वातस्थान
कना दीपकनी पठें निष्प्रकंपचित्तवान् थइने पूर्व

लाथी विपरीत रहेवुं, ते बीजुं एकत्वपृथक्त्वम विचारशुक्लध्यान. ए ध्यान गमे ते एक योग थकां थाय छे. ए बे ध्यान, यद्यपि पूर्वगत श्रुता वलंबीने होय छे, तथापि मरुदेव्यादिकनें श्रुत विना पण थयां हतां, ए विशेषता छे.

३ तेरमा गुणगणानें अंतें मनोयोग, तथा वचनयोग रुंध्या पछी काययोग रुंधता होय, ते त्रीजुं सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्तिनामें शुक्लध्यान, आ ध्यान, एकला मात्र काययोगेंज थाय छे.

४ शैलेशीगुणगणे गये थके क्रियाविछेद थईने जे पाछुं पडवुं नहीं, ते चोथुं व्युच्छिन्नक्रिया अप्रतिपाति शुक्लध्यान कहियें. ए ध्यान, योगना अभावें थाय छे. ध्यानपणुं पूर्व प्रयोगवडे थाय छे, जेम दंमवडे चक्र फेरवीने ते दंम कहाडी लीधा पछी पण पूर्वना प्रयोगथी चक्र फरतुंज रहे छे, तेम जाणवां. ए चार ध्यान कह्यां, पण अभ्यंतर त पमां मात्र धर्मध्यान अने शुक्लध्यान, ए बे उप योगी छे. केम के? ए बे मोक्षनां कारणभूत छे.

बहुं (उस्सग्गोविअ के०) कायोत्सर्ग तप पण द्रव्यथी तथा नावथी बे नेदें छे. तेमां द्रव्यो त्सर्गना चार नेद छे, अने नावोत्सर्गना त्रण नेद छे, तिहां प्रथम द्रव्योत्सर्ग कहे छे.

१ गच्छनो त्याग करी जिनकल्पादिक जे आ दरवो, ते पहेलो गणोत्सर्ग; २ अणसणादिक व्रत लइने शरीरनो जे त्याग करवो, ते बीजो देहोत्सर्ग; ३ कल्पविशेषें उपधिनो जे त्याग क रवो, ते त्रीजो उपध्युत्सर्ग, ४ अधिक अशना दिक लेवानो त्याग करवो तथा अशुद्धमान ना त पाणी एटले अशनादिक चारने लेवानो जे त्या ग करवो, ते चोथो अशुद्धनत्तपाण उत्सर्ग. ए चार प्रकारें द्रव्यथी उत्सर्ग जाणवो. उत्सर्ग एटले त्याग करवो, ए अर्थ समजवो.

हवे नावोत्सर्गना त्रण नेद कहे छे. १ क्रो धादिक चारनो जे त्याग करवो, ते पहेलो कषा योत्सर्ग. २ नरकादिकना नवनुं आउखुं बांधवा नां कारण, जे मिथ्यात्वादिक छे, तेनो जे त्याग,

ते बीजो नवोत्सर्ग. अर्थात् संसारोत्सर्ग. २ बंधनां हेतु जे ज्ञानावरणीयादिक कर्म ज्ञानप्रत्यनीकपणादिक छे तेनो जे त्याग, तेने त्रीजो कर्म उत्सर्ग कहियें. ए जावथी उत्सर्ग त्रण नेदें कह्यो, एथी कर्मनी निर्जरा थाय छे. ए रीतें ए छ प्रकारें (अप्भिंतरउतवो के०) अभ्यंतरतप (होई के०) छे, ए छ नेदने सम्यग्दृष्टि जीव, तप करी माने. एम ए बार प्रकारना तपें करी निर्जरातत्त्व कह्युं ॥ ३६ ॥

॥ इति श्री निर्जरातत्त्व विचारः समाप्तः ॥ ७ ॥

पूर्वोक्त बंधतत्त्वना चार प्रकारनुं वर्णन करे छेः—

पयइ सहावो वुत्तो, ठिइ काला व
हारणं ॥ अणुनागो रसो णेउ,
पएसो दल संचउ ॥ ३७ ॥

अर्थः— अहींयां चार प्रकारनो बंध, ते मोदकने दृष्टांतें जाणवो. जेम सूंठ प्रमुख पदार्थ ना

खीने मोदक कर्यो होय, ते वायुरोगनुं हरण करे छे; जीरुं प्रमुख टाहाढी वस्तु नाखीने मोदक कर्यो होय, ते पित्तरोगनुं हरण करे छे; इत्यादिक जे द्रव्यना संयोगें करी मोदक नीपन्यो होय, ते मोदक, द्रव्य गुणानुसारें वात, पित्त, तथा कफादिक रोगोनुं हरण करे छे, ते तेनो स्वभाव जाणवो. तेम ज्ञानावरणीय कर्मनो ज्ञान अपहारक स्वभाव छे. सामान्य उपयोगरूप जे दर्शन, तेने नाश करवानो दर्शनावरणीय कर्मनो स्वभाव छे. अनंत अव्याबाध सुखने टालवानो वेदनीय कर्मनो स्वभाव छे,सम्यक्त्व तथा चारित्रने टालवानो मोहनीय कर्मनो स्वभाव छे. अक्षय स्थितिने टालवानो आयुः कर्मनो स्वभाव छे. शुद्ध अवगाहनानें टालवानो नामकर्मनो स्वभाव छे. अरमाना अगुरु लघु गुणने टालवानो गोत्रकर्मनो स्वभाव छे. अने अनंत दान, अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग, तथा अनंत वीर्य, तेने टालवानो अंतराय कर्मनो स्वभाव छे.

तेम इहां प्रथम (पयइ के०) प्रकृतिबंध ते कर्म ना (सहावो के०) स्वभावने (वुत्तो के०) कह्यो छे.

२ जेम ते मोदकनुं पक्ष, मास, बे मास, त्रण मास, तथा चार मास सुधी रहेवानुं काल मान होय, तेने स्थिति कहियें. तेम कोइक कर्म पण जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तस्थिति रहे, अने उ त्कृष्टतायें सित्तेर कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण स्थिति रहे, ते स्थितिनी वचमां जे कर्म जेटली रहेवानी स्थितियें बांध्युं होय, ते कर्म, तेटलो काल रहे, तेने (कालावहारणं के०) कालनुं अवधा रण एटले कालना निश्चय करवा रूप (ठिइ क०) स्थितिबंध कहीयें.

३ ते मोदक कोइ मीठो होय छे, कोइ कडवो होय छे, अने कोइ तींखो होय छे, तेमज कोइ मोदकनो एक गणीयो रस होय छे, कोइकनो बे ग णीयो रस होय छे, इत्यादि अनेक प्रकारें अल्प विशेषत्व होय छे. तेम कोइ कर्मनो शुभ, तीव्र, मंद, विपाक होय छे, अने कोइ कर्मनो अशुभ,

तीव्र, मंद विपाक होय छे. जेम शातावेदनीया दिक कर्ममां कोईकनो शुभ रस अल्प होय, अने कोईकनो शुभ रस घणो होय, तेने त्रीजो (अ णुभागोरसोणेउ के०) (अनुभागो रसोज्ञेयः) ए अनुभागबंध ते कर्मनो रसरूप जाणवो.

४ ते मोदक कोइक अल्पदल परिमाणथी उ त्पन्न थयेलो होय छे, कोइ बहुदलथी उत्पन्न थयो होय, अने कोइक बहु दलथी नीपन्यो होय. एवी रीतें मोदकनुं जे दलपरिमाण, तेने प्रदेश कहियें. तेम कोइक कर्मपुद्गलनां दल थोडां होय छे, कोइनां वधारे होय छे, तेनुं परिमाण, ते (दलसंचउ के०) दलसंचयरूप चोथो (प एसो के०) प्रदेशबंध कहियें ॥ २४ ॥

हवे आठे कर्मोनो स्वभाव, दृष्टांतें करी देखाडे छे,

पड पडिहार सि मच्च, हड चित्त कु

लाल भंडगारीणं ॥ जह एएसिं भा

वा, कम्माणविजाण तह भावा ॥२५॥

अर्थः—पहेलुं (पड के०) आंखना पाटा समान ज्ञानावरणीय कर्मनो स्वनाव छे. तेना पांच नेद छे. तिहां १ जेना उदयथी औत्पातिकी, वैनयिकी. कार्मणिकी पारिणामिकी. ए चार प्रकारनी बुद्धि न उपजे, ते प्रथम मति ज्ञानावरणीय कर्म. २ जेना उदयथी जणवुं, गणवुं, न आवडे, अथवा वांचवा तथा सांजलवा उपर रुचि उत्पन्न न थाय, ते बीजुं श्रुतज्ञानावरणीय कर्म. ३ जेना उदयथी अवधिज्ञान न उपजे, ते त्रीजुं अवधि ज्ञानावरणीय कर्म. ४ जेना उदयथी मनःपर्यव ज्ञान न उपजे, ते चोथुं मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्म. तेमज ५ जेना उदयथी केवलज्ञान न उपजे, ते पांचमुं केवलज्ञानावरणीय कर्म कहियें. ए ज्ञानावरणीय कर्म ते जीवना अनंत ज्ञान गुणने रोके छे.

बीजुं दर्शनावरणीय कर्म, ते (पडिहार के०) पोलिया समान छे. जेम कोइएक जीव, राजानुं दर्शन करवा वांछे, पण पोलियो दर्शन करवा न आपे, तेम जीवनो सामान्यपणे सर्व वस्तु देखवानो स्व

ज्ञाव छे, पण दर्शनावरणीय कर्मना उदयथी न देखे. ते दर्शनावरणीय कर्म, चार प्रकारें छे. १ चक्षुदर्शनावरणीय, २ अचक्षुदर्शनावरणीय, ३ अवधिदर्शनावरणीय, अने ४ केवलदर्शनावरणीय. तथा ए कर्मना उदयथी १ निद्रा, २ निद्रानिद्रा, ३ प्रचला, ४ प्रचलाप्रचला, अने ५ थीणद्धी. ए पांच प्रकारनी निद्रा पण होय. ए सर्व मली नव प्रकारना दर्शनावरणीय कर्मे जीवना अनंत दर्शनगुण रोक्यो छे.

त्रीजुं वेदनीय कर्म ते (असि के०) मधुलिप्त तीक्ष्ण खड्गनी धारानुं जे चाटवुं, ते समान छे. जेम ते खड्गधाराने चाटतां तो मिठाश उपजे, पण जेवारें जीज कपाय, तेवारें अशाता थाय. एम शातावेदनीयनो विपाक, मध चाटवा सरिखो छे, अने अशाता वेदनीयनो विपाक, खड्ग धारा चाटवा सरिखो छे. संसारमां शाता ते अशातायें मिश्रित जाणवी. ए बे प्रकारना वेदनीय कर्मनो स्वज्ञाव, जीवना अव्याबाध गुणने रोकवानो छे.

चोथुं मोहनीयकर्म, ते (मद्य के०) मदिरानी छाक समान छे, जेम मदिरा पीधे थके जीव विकल थाय छे, हित अहित कांहिं जाणतो नथी, तेम मोहनीयना उदयथी पण जीव, परवश थइ जाय, धर्माधर्मने न जाणे. ए कर्मनो, जीवना सम्यक्त्वदर्शन गुण तथा अनंतचारित्र गुण रोकवानो स्वजाव छे.

पांचमुं आयुःकर्म. ते (हड के०) हड समान छे. जेम हडमां पडेलो प्राणी, निकलवा वांछे. पण राजाना हुकुम विना निकली न शके, तेम ए आयुःकर्म पण यद्यपि सुख दुःख कांहिं पण पोतें उपजावतुं नथी, तथापि चार गतिने विषे सुख दुःखनुं आधारजूत जे शरीर, तेमांहे हड नी पेरें जीवने राखे छे.जेम अशुज नरकादिकनी गतिनुं आउखुं जोगवतो छतो जीव, त्यांथी निकलवा वांछे, पण आयु पूर्ण कीधा विना निकली न शके. ए कर्मनो जीवना अविनाशी गुण रोक्यानो स्वजाव छे.

छठुं नामकर्म. ते (चित्त के०) चितारा समान छे, जेम निपुण चित्रकार सारां, तथा नरसां, काला धोला रंगनां, नानां, महोटां अनेक प्रकारनां रूप आलेखे,तेम ए कर्मना उदयथी जीव पण चित्ररूप संसारमां देव तथा मनुष्यादिकना रूडां रूप अनेक प्रकारनां करे. अने नरक तथा एकेंद्रियादिकनां माठां रूप पण अनेक प्रकारनां करे, ए कर्मनो जीवना अरूपीगुण रोक्यानो स्वभाव छे.

सातमुं गोत्रकर्म, ते (कुलाल के०) कुंभार समान छे, जेम कुंभार घृतादिकनो घडो घडे. ते पूजनीय कहेवाय, अने मद्यादिकनो घट बनावे. ते निंदनीय कहेवाय,तेम जीव पण ए कर्मना उदयथी उंच गोत्रें ऊपजे, तो पूजनीय थाय. अने जो नीचगोत्रें उपजे,तो निंदनीय थाय. ए कर्मनो, जीवना अगुरुलघु गुण रोक्यानो स्वभाव छे.

आठमुं अंतरायकर्म. ते (भंडगारीणं के०) भंडारी समान छे. जेम राजा दान देवरावे, पण भंडारी विपरीत थको न आपे. तेम ए कर्मना उद

यथी जीव, दानादिक करी शके नहीं. ए कर्मनां अ नंत दान, अनंतलाज, अनंतजोग, अनंत उपजोग अने अनंतवीर्य, एवी अनंतशक्तिना गुणने रोक्या नो स्वजाव छे. (जह के०) जेम (एएसिं के०) ए आठ पट्टादिक वस्तुनो (जावा के०) स्वजाव छे, तेम (कम्माणवि के०) आठ कर्मनो पण (जाण के०) समज. (तह के०) तेमज (जावा के०) स्व जाव छे. ए आठ कर्मप्रकृतिनो स्वजाव कह्यो॥ २०॥

ए आठे कर्मनी प्रत्येकें उत्तरप्रकृतिनी संख्या कहे छे.

इह नाण दंसणावर, ण वेय मोहाउ
नाम गोआणि॥ विग्घं च पण नव ङु
अ, ठवीस चउ तिसय ङु पण विहं॥२ए॥

अर्थः–(इह के०) ए शास्त्रनेविषे. (नाण के०) ज्ञानावरणीय, अने (दंसणावरण के०) दर्शनावरणीय, (वेय के०) वेदनीय, (मोह के०) मोहनीय, (आउ के०) आयु, (नाम के०)

नाम, (गोआणि के०) गोत्र, (विग्घं के०) विघ्न एटले अंतराय. ए आठ कर्मनी (च के०) वली उत्तर प्रकृति अनुक्रमें कहे छे, तेमां ज्ञानावरणीय कर्मनी (पण के०) पांच प्रकृति, दर्शनावरणीय कर्मनी (नव के०) नव प्रकृति, वेदनीय कर्मनी (डु के०) बे प्रकृति, मोहनीय कर्मनी (अठ्वीस के०) अठावीश प्रकृति, आयुःकर्मनी (चउ के०) चार प्रकृति, नामकर्मनी (तिसय के०) एकशो त्रण प्रकृति, गोत्रकर्मनी (डु के०) बे प्रकृति. अंतराय कर्मनी (पण के० पांच प्रकृति, (विहं के०) ए प्रकारें करीने, आठ कर्मनां नाम अने तेनी उत्तरप्रकृति एकशो अठावन संख्यायें जाणवी. ए प्रथम प्रकृतिबंध कह्यो ॥ ३ए ॥

हवे आठे कर्मोनो उत्कृष्टस्थितिबंध कहे छे.

नाणे अ दंसणावर,णे वेअणिए चेव
अंतराए अ ॥ तीसं कोडाकोडी, अ
यराणं ठिइ अ उक्कोसा ॥ ४० ॥

सत्तरि कोडाकोडी, मोह्णिए वीस
नाम गोएसु ॥ तित्तीसं अयराइं,
आउ ठिइ बंध उक्कोसा ॥ ४१ ॥

अर्थः—(नाणे के०) ज्ञानावरणीय (दंसणावरणे के०) दर्शनावरणीय, (वेअणीए के०) वेदनीय, (चेव के०) निश्चें (अंतराए के०) अंतराय, ए चारे कर्मनी (तीसंकोडाकोडी के०) त्रीशकोडाकोडी, (अयराणंठिइ के०) सागरोपमनी स्थिति, (उक्कोसा के०) उत्कृष्टी जाणवी. अने (सत्तरि कोडाकोडी के०) सीत्तेर कोडाकोडी सागरोपमनी (मोह्णिए के०) मोह्नीयकर्मनी स्थिति जाणवी. तथा (वीसनामगोएसु के०) वीश कोडाकोडी सागरोपमनी नाम कर्म अने गोत्रकर्मनी स्थिति जाणवी. तथा (तित्तीसंअयराइं के०) तेत्रीश सागरोपमनी (आउठिइबंध के०) आयुःकर्मनी स्थितिनो बंध (उक्कोसा के०) उत्कृष्टो जाणवो ॥ ४० ॥ ४१ ॥

हवे आठे कर्मोनो जघन्य स्थितिबंध कहे छेः—

बारस मुहुत्त जहन्ना, वेयणिए
अठ नाम गोएसु ॥ सेसाणंत
मुहुत्तं, एयं बंध ठिई माणं ॥ ४२ ॥

अर्थः—(बारस मुहुत्त जहन्ना के०) बार मुहूर्त्तनी जघन्यस्थिति (वेयणीए के०) वेदनीय कर्मनी जाणवी. अने (अठ के०) आठ मुहूर्त्तनी (नामगोएसु के०) नामकर्म, अने गोत्र कर्मनी जघन्यस्थिति जाणवी. (सेसाण के०) शेष बाकी रह्या जे ज्ञानावरणीय,दर्शनावरणीय, मोहनीय, आयु अनें अंतराय. ए पांचे कर्मनी (अंतमुहुत्तं के०) अंतरमुहूर्त्तनी जघन्यस्थिति जाणवी. अहींयां जघन्यशब्द सर्वत्र जोडवो. (एयं के०) ए (बंधठिई के०) कर्मना बंधनी स्थितिनुं (माणं के०) मान एटले प्रमाण, संक्षेपथी कह्युं. अने विस्तार रुचिवंत जीवें पंचम कर्मग्रंथादिको

थकी सविस्तरपणे जोइ लेवुं ॥ ४२ ॥ इति द्वितीयस्थितिबंधस्वरूपं समाप्तम् ॥

हवे त्रीजुं रसबंधनुं स्वरूप, संक्षेपथी कहीयें छैयें. त्यां रागादिकें ग्रस्त जीव, अजव्य जीवना राशिथी अनंतगुणा अने सिद्धना जीवोना राशिने अनंतमे जागें एटले परमाणुयें निष्पन्न कर्मस्कंध, समय समयप्रत्यें ग्रहण करे छे, ते दलीयाने विषे परमाणु दीठ कषायना वशथकी सर्व जीवना राशिथी अनंतगुणा रस विजागना पलिछेद होय. ते रस, तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम तथा मंद, मंदतर, मंदतमादिक अनेक प्रकारें होय. तिहां अशुज व्याशी पापप्रकृतिनो तीव्ररस, संक्लेषपरिणामें करी बंधाय अने शुज बहेंतालीश पुण्यप्रकृतिनो तीव्ररस, विशुद्धियें करी बंधाय, तथा मंद रसनो बंध, तेथकी विपर्यय होय. ते आवी रीतेंः– शुजप्रकृतिनो मंदरस, संक्लेषपरिणामें करी बंधाय अने अशुज प्रकृतिनो मंदरस विशुद्धियें करी बंधाय.

हवे प्रकृतिना एकगणीया प्रमुख रस जेणें करी बंधाय, ते कहे छेः— अशुभ प्रकृतिनो चौगणीयो रस, अनंतानुबंधीया कषायें करी बंधाय, त्रिगणीयो रस, अप्रत्याख्यानीया कषायें करी बंधाय, बेगणीयो रस, प्रत्याख्यानीया कषायें करी बंधाय, अने एकगणीयो रस, संज्वलन कषायें करी बंधाय. तथा शुभ प्रकृतिनो रस, तेथकी विपरीतपणे जाणवो. ते आवी रीतेंः—शुभ प्रकृतिनो चौगणीयो रस, संज्वलन कषायें करी बंधाय तथा त्रिगणीयो रस, प्रत्याख्यानावरण अने अप्रत्याख्यानावरण कषायें करी बंधाय, बेगणीयो रस, अनंतानुबंधीया कषायें करी बंधाय, अने एकगणीयो रस तो शुभ प्रकृतिनो छेज नहिं, अंतरायनी पांच प्रकृति देशघाती छे, तथा एक केवलज्ञानावरण विना बाकीनी चार प्रकृति, ज्ञानावरणीयनी तथा एक केवल दर्शनावरण विना त्रण प्रकृति दर्शनावरणीयनी तथा संज्वलन कषायनी चार प्रकृति, एवं शोल थई. अने सत्तरमो पुरुष वेद. ए सत्तर प्रकृतिनो ए

कगाणियो, बेगाणीयो, त्रिगाणीयो, अने चौगाणीयो रस पण बंधाय, अने शेष सर्व शुज्ञ अशुज्ञ प्रकृतिनो बेगाणीयो, त्रिगाणीयो तथा चौगाणीयो रस बंधाय पण एकगाणीयो रस न बंधाय.

हवे शुज्ञाशुज्ञ रसनुं स्वरूप कहे छे. अशुज्ञ पाप प्रकृतिनो रस, निंबना रसनी परें कटुक जाणवो. अने शुज्ञपुण्यप्रकृतिनो रस, शेलडीना रसनी पेरें मिष्ट जाणवो. जेम निंबनो रस अण कढयो ते एकगाणीयो कटुक कहियें, तथा अग्नि उपर अर्द्ध कढयो अने अर्द्ध राख्यो ते बेगाणीयो कटुक तर कहीयें, तथा ते रसना त्रण जाग करी बे जाग अग्नि उपर अवटावियें अने एक जाग रहे, ते त्रिगाणीयो कटुकतम कहीयें. तेज रसना चार जाग करी त्रण जाग अवटावीयें अने एक जाग रहे, ते चौगाणीयो अत्यंत कटुकतम कहीयें. एज रीतें शुज्ञ प्रकृतिनें विषे शेलडीनो मधुर रस पण जाणी लेवो. इति रसबंधस्वरूपं तृतीयं समाप्तम् ॥

हवे चोथा प्रदेशबंधनुं स्वरूप कहे छे. लोकनें

विषे १ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तैजस, ५ जाषा, ६ श्वासोच्छ्वास, ७ मन अने ८ कार्मण. ए आठ जातिनी कर्मवर्गणा छे. ते एकेकी वर्गणा जीवने ग्रहण योग्य तथा अग्रहण योग्य एवा बे बे प्रकारें छे. तिहां प्रथम बे प्रदेशथी मांमीने अजव्यथी अनंतगुणाधिक प्रदेश लगें औदारिक वर्गणा ते थोडा प्रदेश अने स्थूल माटें जीवने अग्रहणयोग्य वर्गणा जाणवी. तेवार पछी बीजी औदारिक ग्रहणयोग्य, ते पण अनंती वर्गणा जाणवी. तेवार पछी घणा प्रदेश अने सूक्ष्म परिणाम माटें औदारिकने अग्रहण योग्य तथा वैक्रियनी अपेक्षायें थोडा प्रदेश अने स्थूलपरिणाम माटें वैक्रियने पण अग्रहण योग्य. एम बेहुने ग्रहण करवानें अयोग्य ते पण अजव्यथी अनंतगुणादिक वर्गणा जाणवी. तेवार पछी वैक्रियने ग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी. एम सर्व आठ जातिनी वर्गणाने विषे ग्रहण योग्य अने अग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी.

समान प्रादेशिक स्कंध अनंता मळे, तेवारें एक वर्गणा थाय. तेवी सर्वजातिनी समय समयने विषे जीव अनंती वर्गणा लीये छे. ए आठे वर्गणामांहेली उपली उपली वर्गणा अनुक्रमें एक बीजाथी सूक्ष्म सूक्ष्म जाणवी. अने अनंते अनंते प्रदेशें अधिक जाणवी. तेनी क्षेत्रावगाहना अल्प अल्प जाणवी. सर्वने अवगाहना अंगुलनो असंख्यातमो भाग होय, पण पहेलीथी बीजी वर्गणाने असंख्यातमो भाग उंछो जाणवो.

ए आठ मांहेली प्रथमनी चार वर्गणा आठ फरस युक्त होय, दृष्टियें गोचर आवे अने आगली चार दृष्टि अगोचर सूक्ष्मपरिणाम माटें तेने छेहला १ शीत, २ उष्ण, ३ रूक्ष अने ४ स्निग्ध. ए चार फरस होय. बंध बे प्रकारें छे. तेमां आत्माना प्रदेशसाथें कर्मपुजलनुं मांहोमांहे जे क्षीरनीरनी परें मळवुं, ते द्रव्यबंध. अने जे आत्माना शुभाशुभ परिणामें करी अष्ट प्रकारें कर्म बंधाय,

ते नावबंध जाणवो. इत्यादिक प्रदेशबंधनो अ
धिकार अल्पमात्र लख्यो. विस्तारें पांचमा कर्म
ग्रंथमध्ये प्रदेशबंधाधिकारें जोवुं ॥

॥ इति बंधतत्त्वविचारः समाप्तः ॥ ७ ॥

॥ हवे नवमा मोक्षतत्त्वने कहेतो थको प्र
थम मोक्षतत्त्वना नव नेद कहे छेः—

संतपय परूवणया, दव पमाणं च
खित्त फुसणाय ॥ कालोअ अंतर .
नाग, नावे अप्पा बहु चेव ॥४३॥

अर्थः—मोक्षने विषे छता पदनी प्ररूपणा ते
गति प्रमुख मार्गणाद्वारने विषे सिद्धनी सत्तानुं
निरूपण करवुं, एटले चौदमार्गणामां सिद्ध पद
कइ मार्गणायें छे? एवी प्ररूपणा करवी, ते प
हेलुं (संतपयपरूवणया के०) छता पदनी प्ररू
पणाद्वार. सिद्धना जीवद्रव्यनुं प्रमाण करवुं,
एटले सिद्धनां जीवद्रव्य, केटलां छे? ते विचा

रवुं, ए बीजुं (दव्वपमाणं के०) द्रव्यप्रमाण द्वार. (च के०) वली सिद्धने अवगाहना क्षेत्र केटलुं छे? ते विचारवुं, ए त्रीजुं (खित्त के०) क्षेत्रद्वार. केटला आकाश प्रदेशने सिद्धना जीव फरसे, एम जे विचारवुं, ते चोथुं (फुसणाय के०) स्पर्शनाद्वार. आंहीं जे क्षेत्र अवगाहीने रहीयें, ते अवगाहना अने त्यां अवगाही रहेतां जेटलुं क्षेत्र फरसीयें, ते स्पर्शना जाणवी. जेम परमाणुने एक प्रदेश अवगाहनारूप क्षेत्रने सात प्रदेशनी स्पर्शना होय. काल आश्रयी सिद्धने सादि अनंतरूप कहेवुं, ते पांचमुं (कालोअ के०) कालनुं द्वार. सिद्धना जीवने विषे जे आंतरूं कहेवुं. ते छठुं (अंतर के०) अंतरद्वार. ते सिद्धना जीव, संसारी जीवोने केटलामे भागें छे? एम जे विचारवुं, ते सातमुं (भाग के०) भागद्वार. भाव ते क्षायिकादिक पांच भाव छे, तेमां सिद्धना जीव कया भावें छे? एम जे विचारवुं, ते

आठमुं (नावे के०) नावद्वार. अल्पबहुत्व जे सिद्धने कहेवुं, एटले पंदर नेदें सिद्ध छे, ते मांहेला कया सिद्धना नेदना जीव थोडा अने कया सिद्धना नेदना जीव घणा? एम जे विचारवुं, ते नवमुं (अप्पाबहु के०) अल्पाबहुत्व नामें द्वार. (चेव के०) निश्चें ए नव द्वार, मोक्तत्त्वनां विचारवां ॥४३॥

हवे अनुक्रमें नव नेदोना अर्थ, कहेतो थको प्रथम सत्पदप्ररूपणा द्वार कहे छेः—

संतं सुद्ध पयत्ता, विज्जंतं ख कुसुम व न असंतं ॥ मुक्खत्ति पयं तसउ, परूवणा मग्गणाईहिं ॥ ४४ ॥

अर्थः—मोक्षपद ते (संतं के०) छतुं छे, (सुद्धपयत्ता के०) शुद्धपद पणा माटें एटले एक पदपणा माटें छतुं छे, केम के? जगत्मां जेटला एकपदवाची घटपटादिक पदार्थ छे, ते सर्व अवश्य छता छे, अने जे जे बे बे पदना पदार्थ छे, ते ते पदार्थ छता पण छे, ने अछता पण छे. त्यां दृष्टांत कहे छे, जेम

अश्वशृंग, वंध्यापुत्र, ए बे पदनां नाम छे, ते अछतां छे. तेमज गोशृंग, महिषश्रृंग, राजपुत्र, ए बे पदो नां नामो छे, ते छतां पण छे, माटें मोक्षपद ते (विज्जंतं के०) विद्यमान छे. पण (खकुसुमव्व के०) आकाशना फुलनी परें (नअसंतं के०) अछतुं नथी, एटले अविद्यमान नथी. (मुख्कत्तिपयं के०) मोक्ष इति पदं, ते मोक्षपद (तसत्र के०) तेनी (परूवणा के०) प्ररूपणा ते (मग्गणाई हिं के०) गत्यादिक मार्गणा द्वारें करी करवी.

त्यां नव द्वार मांहेला प्रथम सत्पद प्ररूपणा द्वारने मार्गणा द्वारें प्ररूपतां प्रथम मूल चौद मार्गणा छे, तेनी उत्तर बाशठ मार्गणा थाय छे, तेनां नाम कहे छे. जेणें करी सर्व जीवद्रव्यने मार्गीयें एटले विचारीयें, तेने मार्गणा कहीयें॥४४॥

गइ इंदीए काए, जोए वेए कसाय
नाणे य॥ संजम दंसण लेसा, भव
सम्मे सन्नि आहारे ॥ ४५ ॥

अर्थः—मनुष्य, देवता, नारकी अने तिर्यंच. ए रीतें प्रथम (गइ के०) गतिमार्गणा, चार प्रकारें छे. एकेंद्रिय, बेंद्रिय, तेंद्रिय, चउरिंद्रिय, अने पंचेंद्रिय, ए रीतें बीजी (इंदीए के०) इंद्रिय मार्गणा पांच प्रकारें छे. पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति अने त्रस.ए रीतें त्रीजी (काए के०) काय मार्गणा छ प्रकारें छे. मन, वचन अने काया, ए रीतें चोथी (जोए के०) योगमार्गणा त्रण प्रकारें छे. पुरुष, स्त्री ने नपुंसक, ए रीतें पांचमी (वेए के०) वेदमार्गणा त्रण प्रकारें छे. क्रोध, मान, माया ने लोभ, ए रीतें छठी (कसाय के०) कषायमार्गणा चार प्रकारें छे. मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव, अने केवल. ए पांच ज्ञान तथा मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान ने विभंगज्ञान, ए त्रण अज्ञान, ए रीतें सातमी (नाणे के०) ज्ञानमार्गणा आठ प्रकारें छे. पांच चारित्रनां नाम, प्रथम संवरतत्त्वमां कह्यां छे, अने छठुं देशविरति, तथा सातमुं अविरति, ए रीतें आ

ठमी (संजम के०) संयममार्गणा, सात प्रकारें छे. चक्षु, अचक्षु, अवधि अने केवल, ए रीतें नवमी (दंसण के०) दर्शनमार्गणा चार प्रकारें छे. कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म अने शुक्ल. ए रीतें दशमी (लेसा के०) लेश्यामार्गणा ठ प्रकारें छे. नवसिद्धि, ने अनवसिद्धि, ए रीतें अग्यारमी (नव के०) नव्य एटले मुक्तिगमन योग्यायो ग्यनी अपेक्षायें नवसिद्धादि मार्गणा बे प्रकारें छे. औपशमिक, सास्वादन, क्षायोपशमिक, क्षायिक, मिश्र अने मिथ्यात्व. ए रीतें बारमी (सम्मे के०) सम्यक्त्वमार्गणा ठ प्रकारें छे. संज्ञी ने असंज्ञी, ए रीतें तेरमी (सन्नि के०) संज्ञीमार्गणा बे प्रकारें छे. आहारी ने अणा हारी, ए रीतें चौदमी (आहारे के०) आहा रमार्गणा बे प्रकारें छे. एम सर्व मली मूल चउद मार्गणानी उत्तरमार्गणा बाशठ छे ॥ ४५ ॥

बाशठ मार्गणा स्थानमांथी जे मार्गणायें अ तीतकालें सिद्ध थया, ते स्थाननां नाम कहे छेः—

नरगइ पणिंदि तस भव, सन्नि अह
क्खाय खइअसम्मत्ते ॥ मुक्खोणाहार
केवल, दंसण नाणे न सेसेसु ॥४६॥

अर्थः— पहेली गतिमार्गणा चार छे, तेमां (नरगइ के०) मनुष्यगतिमांथी मोक्षे गया छे. पण शेष त्रण गतिमांथी कोइ मोक्षे गया नथी, बीजी इंद्रियमार्गणा पांच छे, तेमां (पणिंदि के०) पंचेंद्रियमांथी मोक्षे गया छे, शेष चारे इंद्रियमांथी कोइ मोक्षे गया नथी. त्रीजी कायमार्गणा छ छे, तेमां (तस के०) त्रसकायमांथी मोक्षे गया छे, शेष पांचेकायमांथी कोइ मोक्षे गया नथी. चोथी भवमार्गणा बे छे, तेमां (भव के०) भवसिद्धिक मोक्षे गया छे, पण अभवसिद्धिकमांथी कोइ मोक्षे गया नथी. पांचमी संज्ञिमार्गणा बे छे, तेमां (सन्नि के०) संज्ञीमांथी मोक्षे गया छे, पण असंज्ञीमांथी कोइ मोक्षे गया नथी. छठी चारित्रमार्गणा सात छे. तेमां

थी (अहखाय के०) यथाख्यात चारित्रवाला (मुरको के०) मोक्षें गया छे, शेष छ चारित्र वाला कोइ मोक्षें गया नथी. सातमी सम्यक्त्व मार्गणा छ छे, तेमांथी (खइअसम्मत्ते के०) क्षायिक सम्यक्त्ववंत मोक्षें गया छे, शेष पांच सम्यक्त्ववंत मोक्षें गया नथी. आठमी आहारमार्गणा बे छे, तेमां (अणाहार के०) अणाहारी जीव मोक्षें गया छे, परंतु आहारी मोक्षें गया नथी. नवमी दर्शनमार्गणा चार छे, तथा दशमी ज्ञान मार्गणा आठ छे, तेमांथी (केवलदंसणनाणे के०) केवल दर्शन अने केवल ज्ञान, ए बे मार्गणा स्थानवाला मोक्षें गया छे. परंतु शेष त्रण दर्शन वाला तथा सात ज्ञानवाला मोक्षें गया नथी. ए रीतें ए दश मार्गणास्थानमांथी मोक्षें गया छे, अने (सेसेसु के०) शेष रहेली जे १ कषाय मार्गणा, २ वेदमार्गणा, ३ योगमार्गणा, ४ अने लेश्यामार्गणा. ए चारमार्गणा स्थानने विषे वर्त्त

नारा जीवो (न के०) मोक्षने पाम्या नथी. ए सत्पदप्ररूपणा नामा प्रथम द्वार कह्युं ॥ ४६ ॥

हवे द्रव्यप्रमाणादि बे द्वार कहे छेः—

दव्वपमाणे सिद्धा, णं जीव दव्वाणि
हुंति णंताणि ॥ लोगस्स असंखि
ज्जे, भागे इक्कोय सव्वेवि ॥ ४७ ॥

अर्थः— (दव्वपमाणे के०) द्रव्य प्रमाण द्वारने विषे विचारतां (सिद्धाणं के०) सिद्धना (जीवदव्वाणि के०) जीवद्रव्य (हुंति के०) छे. (णंताणि के०) अनंता एटले सिद्धना जीव द्रव्य, अनंतां छे. ए बीजुं द्वार कह्युं. हवे त्रीजुं क्षेत्रद्वार कहे छेः— (लोगस्सअसंखिज्जेभागे के०) चउद राजलोकने असंख्यातमे भागें (इक्कोयसव्वेवि के०) एक सिद्ध पण त्यां रहे छे, अने सर्वसिद्ध पण त्यां रहे छे. पण एक सिद्ध व्यासक्षेत्रापेक्षायें सर्वसिद्ध व्यास क्षेत्रनुं प्रमाण अधिक जाणवुं. परंतु ते क्षेत्रमान सर्व लो

कने असंख्यातमे जागें जाणवुं. केम के? उत्कृष्टी अवगाहनावालानुं एक गाउना छठा जाग जेटलुं शरीर होय, ते पण लोकनो असंख्यातमो जाग थयो. अने लघु अवगाहनावालानो पण लोक नो असंख्यातमो जाग थयो, तथा सर्वसिद्ध पण पीस्तालीश लाख योजन प्रमाण सिद्धशिलामां रहे ले, माटें ते पण चौदराज लोकनो असंख्यात मो जाग थयो. ए त्रीजुं द्वार कह्युं ॥ ४७ ॥

हवे स्पर्शनादि त्रण द्वार कहे छेः–

फुसणा अहिआ कालो, इग सिद्ध
पडुच्च साइअणंतो ॥ पडिवाया जा
वाउ, सिद्धाणं अंतरं नहि ॥ ४८ ॥

अर्थः–हवे स्पर्शनाद्वार कहे ले, पूर्वोक्त क्षेत्रथ की सिद्धना जीवोनी (फुसणाअहिआ के०) स्प र्शना अधिक ले. केम के? जेटला क्षेत्रमां सिद्धजग वान् रह्या छे, तेने चारे·बाजुनी तथा नीचें अने उपरनी सर्व दिशाउना आकाशप्रदेश स्पर्श्या छे.

जेम एक आकाश प्रदेशें रह्यो जे पुद्गलपरमाणु, तेने सात आकाशप्रदेशनी स्पर्शना होय छे, माटें स्पर्शना अधिक जाणवी. तथा वली एक सिद्धना जीवनी अवगाहना क्षेत्रना एकेका आकाशप्रदेशप्रत्यें समाक्रमीने प्रत्येकें प्रत्येकें अनंता सिद्ध रह्या छे. एम द्वि, त्रि, चतुः, पंचादि अंशनी अभिवृद्धि जाणवी. तथा तेहिज सिद्धावगाहना क्षेत्रना एकेका प्रदेशप्रत्यें छांमीने पण अनंता सिद्ध रह्या छे. एम मध्यादि प्रदेशप्रत्यें जाणवुं. एम प्रदेशनी वृद्धि हानि करतां जे अवगाढ छे, ते पण अनंत छे, पूर्णक्षेत्रावगाढ सिद्धथी, प्रदेशावगाढ सिद्ध, असंख्यगुणाधिक छे, तेमाटें एक सिद्ध ते परस्परें अवगाढ एहवा पोताना प्रदेशें करी अनंता सिद्धप्रत्यें फरसे, अने क्षेत्रावगाहना भेदप्रदेश, प्रदेशें करी असंख्यगुणाधिक सिद्धप्रत्यें फरसे, तेमाटें क्षेत्र थकी स्पर्शना अधिक जाणवी. इत्यादि संक्षेपथकी कह्युं छे. ए चोथुं स्पर्शनाद्वार कह्युं.

हवे पांचमुं कालद्वार कहे छे. (कालो के०) काल, ते सिद्धना जीवने केटलो होय? (इगसि द्धपडुच्च के०) एक सिद्धने प्रतीत्य एटले आ श्रित्य (साइअणंतो के०) सादि अनंतो काल होय. एटले जे समयें जे जीव मोक्षें गयो, तेवारें तेनी आदि थई. अने फरी त्यांथी तेने (पडि वायाभावाउ के०) पडवानो अभाव छे, एटले त्यांथी पाछुं चववुं नथी, माटें अनंत छे. तेमज सर्वसिद्ध आश्रित्य विचारीयें, तो प्रथमसिद्ध कोण थयो? एवी आदि नथी माटें अनादि पण छे. ए रीतें अनादि अनंत जाणवो. ए काल द्वार कह्युं. हवे छठुं अंतरद्वार कहे छे, ज्यां सिद्ध पणानो भाव प्राप्त थयो, त्यांथी पाछुं (पडि वायाभावाउ के०) पडवानो अभाव छे, माटें (सिद्धाणं के०) सिद्धना जीवोने (अंतरंनत्थि के०) अंतर नथी. केम के? सिद्धपणाथकी चवीने संसारमां आवी बीजो भव करी फरी सिद्धपणुं पामवुं नथी. एटले जे पदवी पाम्या ते पदवी जती

रहे. फरी ते पदवी पामे, तेना वचगालाना काल ने अंतर कहीयें, माटें ते अंतर, सिद्धने नथी,अथवा सिद्धने मांहोमांहे अंतर नथी. ज्यां एक सिद्ध छे,त्यां अनेक सिद्ध रह्या छे, माटें एकमां अनेक सिद्ध छे, एम एक बीजामां क्षेत्रने विषे अबाधा रूप अंतर नथी. ए क्षेत्र आश्रयी सिद्धने मांहोमांहे अंतर नथी. ए अंतरद्वार कह्युं ॥ ४८ ॥

सातमुं नागद्वार, तथा आठमुं नावद्वार कहे छे.

सव्व जियाण मणंते, नागे ते तेसिं
दंसणं नाणं ॥ खइए नावे परिणा,
मि एअ पुण होइ जीवत्तं ॥ ४९ ॥

अर्थः–(सव्वजियाणमणंते नागे के०) सर्व संसारी जीवोने अनंतमे नागें (ते के०) ते सिद्धना जीव छे, केम के? अतीत, अनागत अने वर्त्तमान एवा त्रण कालमां जे कालें ज्ञानीने पूछ्वा थाय, तेकालें ज्ञानी एम कहे, जे असंख्याती निगोद छे, ते प्रत्येक निगोदमां अनंता जीव छे. ते मांहेलो

एक निगोदनो अनंतमो जाग मोक्षे गयो छे. एहिज उत्तर देवाशे. ए सातमुं जागद्वार कह्युं. हवे आठमुं जावद्वार कहे छे. (तेसिं के०) ते सिद्धना जीवोनां (दंसणं के०) केवलदर्शन अने (नाणं के०)केवल ज्ञान ते(खइएजावे के०) क्षायिकजावें वर्त्ते छे. अने (परिणामि के०) पारिणामिकजावें. (एअ के०) ए (पुण के०) वली (होइ के०) होय. (जीवत्तं के०) जीवितपणुं. एटले सिद्धना जीवने बे जाव वर्त्ते छे. त्यां क्षायिकजाव नव जेदें छे. तेमां दानादिक पांच लब्धि, तथा छठुं सम्यक्त्व, अने सातमुं चारित्र, ए सात तो सिद्धमां न संजवे. शेष एक ज्ञान, बीजुं दर्शन, ए बे क्षायिकजावें वर्त्ते छे. अने पारिणामिक जावना त्रण जेद छे,तेमां एक जव्यत्व बीजो अजव्यत्व. ए बें जाव, सिद्धमां न संजवे. शेष एक जीवितपणुं ते पारिणामिक जावें सिद्धमां वर्त्ते छे. यद्यपि सिद्धना जीवोने प्राणदशक नथी, तथापि ज्ञानादि चतुष्टय जाव

प्राण छे. माटें एने जीवितपणुं कहीयें. ए आ ठमुं नावद्वार कह्युं ॥ ४९ ॥

हवे नवमुं अल्पबहुत्व द्वार कहे छेः—

थोवा नपुंस सिद्धा, थी नर सिद्धा
कमेण संखगुणा ॥ इअ मुक्ख तत्त
मेअं, नव तत्ता लेसओ जणिआ ॥५०॥

अर्थः—(थोवानपुंससिद्धा के०) सर्वथकी थोडा नपुंसक सिद्ध थया छे. केम के? जन्म नपुंसकने तो चारित्र प्राप्त न थाय, तेथी ते मोक्षें पण न जाय. अने जे पाछलथी कृत्रिम नपुंसक थया होय, ते उत्कृष्टा एक समयमां दश मोक्षें जाय. माटें सर्वथी थोडा कह्या. ते नपुंसक थकी (थी के०) स्त्री, (नर के०) पुरुष (सिद्धा के०) मोक्षें गया, ते (कमेण के०) अनुक्रमें, (संखगुणा के०) संख्यातगुणा जाणवा. एटले नपुंसकथी स्त्री संख्यात गुणी उत्कृष्टी एक समयमां वीश मोक्षें जाय छे, अने ते स्त्रीथकी

वली पुरुष, संख्यातगुणा उत्कृष्टा समयमां एकशो ने आठ मोक्षें जाय छे. ए अल्पबहुत्व द्वार कह्युं. (इअ के०) ए नवमुं (मुक्कतत्त के०) मोक्षतत्त्व कह्युं, ते पण द्रव्यथी अने नावथी एवा बे नेदें छे. त्यां आठ कर्मनुं आत्म प्रदेशथी जूडुं थावुं, ते द्रव्यमोक्ष, अने आठ कर्मना क्षयनो जे आत्मपरिणाम, ते नावमोक्ष जाणवो. ए रीतें (मेअं के०) ए जीवादिक (नव तत्ता के०) नव तत्त्वो, ते (लेसउ के०) लेशमात्र संक्षेपें करी, (नणिआ के०) कह्यां ॥५०॥

हवे ए नव तत्त्वने जाणवानुं फल कहे छेः—

जीवाइ नव पयछे, जो जाणइ त
स्स होइ सम्मत्तं॥नावेण सद्दहंतो,
आयाण माणेवि सम्मत्तं ॥ ५१ ॥

अर्थः— ए (जीवाइ के०) जीवादिक जे (नवपयछे के०) नव पदार्थ छे, तेने (जो के०) जे प्राणी (जाणइ के०) जाणे छे, (तस्स के०)

ते प्राणीने (सम्मत्तं के०) सम्यक्त्व (होइ के०) होय, अने अपवादपदें तो जे "तमेव सच्चं निस्संकं जं जिणेहिं पवेईयं इत्यादि" शुभ आत्मपरिणामरूप (जावेण के०) जावें करी ए जीवादिक नव पदार्थने विषे जे (सद्दहंतो के०) सद्दहणा राखे, तो ते (अयाणमाणेवि के०) जीवादिक नव पदार्थना ज्ञानथी अजाण एटले रहित होय, तो पण तेने (सम्मत्तं के०) सम्यक्त्व छे, एम जाणवुं ॥ ५१ ॥

हवे ते सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे छेः—

सवाइ जिणेसर जा, सिआइं वय
णाइ नन्नहा हुंति ॥ इइ बुद्धी जस्स
मणे, सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥ ५२ ॥

अर्थः— (सवाइजिणेसरजासिआइं के०) सर्वे तीर्थंकर देवें जांख्यां जे (वयणाइ के०) वचनो, ते (नन्नहाहुंति के०) अन्यथा न होय, (इइबुद्धीजस्समणे के०) एवी बुद्धी जेना मन

नेविषे होय, (तस्स के०) तेने (सम्मत्तंनिच्चलं के०) सम्यक्त्व निश्चल छे, एम जाणवुं. ए समकित ते श्री वीतरागप्रणित तत्त्वश्रद्धानलक्षण रागद्वेषरहित एवो सम एटले निर्मल जे आत्मानो परिणाम, तेने जाणवो ॥ ५२ ॥

हवे सम्यक्त्व पाम्यानुं फल कहे छेः–

अंतो मुहुत्त मित्तं, पि फासिअं हु
ज्ज जेहिं सम्मत्तं ॥ तेसिं अवड्ढ पु
ग्गल, परिअट्टो चेव संसारो ॥५३॥

अर्थः–(अंतोमुहुत्तमित्तंपि के०) एक अंतर मुहूर्त्तमात्र पण एटले नव समयथी मांडीने एक समयें न्यून बे घडी यावत्काल मात्र पण ग्रंथिभेद करी अनंतानुबंधीयानी चोकडी खपावीने (फासिअंहुज्जजेहिं सम्मत्तं के०) फरश्युं होय, जेणें समकेत (तेसिं के०) ते जीवोने (अवड्ढपुग्गलपरिअट्टो के०) अर्द्धपुद्गल परावर्त्त (चेव के०) निश्चयें (संसारो के०) संसार, बाकी

जाणवो. पण ते प्रचुर आशातनावंत आश्रयी एटलो काल जाणवो, परंतु शुद्ध सम्यक्त्व आराधनार तो कोईक तेहीज नवें, कोइक त्रीजे नवें, कोईक सातमे नवें, कोईक आठमे नवें, एम तुरत सिद्धपणाने पामे ॥ ५३ ॥

॥ हवे ते पुजल परावर्त्तनुं मान कहे छेः—

उस्सप्पिणी अणंता, पुग्गल परि
अट्ठउ मुणेअवो ॥ तेणंतातीअद्धा,
अणागयद्धा अणंतगुणा ॥ ५४ ॥

अर्थः—(उस्सप्पिणीअणंता के०) अनंती उत्सर्प्पिणी अने अनंती अवसर्प्पिणी एटलो काल जेवारें जाय, तेवारें (पुग्गलपरिअट्टउ के०) एक पुजल परावर्त्त (मुणेअवो के०) जाणवो. (तेणंता के०) तेवा अनंता पुजल परावर्त्त (अतीअद्धा के०) अतीत कालें गया, अने तेथी पणं (अणंतगुणा के०) अनंत गुणा पु

ग्गल परावर्त्त (अणागयद्धा के०) अनागत कालें जाणो. ए पुजलपरावर्त्तनुं मान कह्युं ॥५४॥

॥ हवे सिद्ध जीवोना पन्नर नेद कहे छेः—

जिण अजिण तिबतिबा, गिहि अन्न सलिंग थी नर नपुंसा ॥ पत्तेअ सयं बुद्धा, बुद्धबोहिय सिद्ध णिक्काय ॥५५॥

अर्थः— पहेला जे तीर्थंकर पदवी पामीने मोक्षे गया, ते (जिण के०) जिनसिद्ध, जाणवा. बीजा जे तीर्थंकर पद पाम्या विना सामान्यकेवली थईने मोक्षे गया ते (अजिण के०) अजिनसिद्ध जाणवा. त्रीजा तीर्थंकरने केवलज्ञान उपन्या पछी जे मोक्षे गया ते (तिब के०) तीर्थसिद्ध जाणवा. चोथा तीर्थंकरने केवलज्ञान उपन्या पहेलां जे मोक्षे गया, ते (अतिबा के०) अतीर्थसिद्ध जाणवा. पांचमा जे गृहस्थना वेशें रह्या थका मोक्षे गया, ते (गिहि के०) गृहस्थलिंगसिद्ध जाणवा. छघा योगी, संन्यासी

प्रमुख तापसना वेशें जे मोक्षें गया, ते (अन्न के०) अन्यलिंगसिद्ध जाणवा. सातमा जे साधुने वेशें मोक्षें गया, ते (सलिंग के०) स्वलिंगसिद्ध जाणवा. आठमा जे स्त्रीवेदपणुं पामीने मोक्षें गया, ते (थी के०) स्त्रीलिंगें सिद्ध जाणवा. नवमा जे पुरुषवेदपणुं पामीने मोक्षें गया, ते (नर के०) पुरुषलिंगसिद्ध जाणवा. दशमा जे कृत्रिम नपुंसकवेदपणुं पामीने मोक्षें गया, ते (नपुंसा के०) नपुंसकलिंग सिद्ध जाणवा. अग्यारमा कोई पदार्थ देखीने एटले बाह्य प्रत्यय देखी प्रतिबोधाया थका जे चारित्र लेइने मोक्षें गया, ते (पत्तेअ के०) प्रत्येकबुद्ध सिद्ध जाणवा. बारमा जे गुरुना उपदेश विना पोतानी मेलें जातिस्मरणादिकें प्रतिबोध पामीने मोक्षें गया छे, ते (सयंबुद्धा के०) स्वयंबुद्धसिद्ध जाणवा. तेरमा जे गुरुनो उपदेश सांभली वैराग्य पामी मोक्षें गया ते (बुद्धबोहिय के०) बुद्धबोधित सिद्ध जाणवा. चउदमा जे एक समयमां

एकज मोक्षें गयो, ते (सिद्ध के०) एक सिद्ध जाणवो. पंदरमा जे एक समयमां घणा जीव मोक्षें जाय, ते (णिक्काय के०) अनेकसिद्ध जाणवा, ए पन्नर भेद सिद्धना कह्या. यद्यपि तीर्थसिद्ध अने अतीर्थसिद्ध ए बे भेदमांहे बीजा तेर भेद आवी गया, तथापि विशेष देखाडवा माटें पंदर भेद कह्या ॥ ५५ ॥

॥ हवे ए पंदर भेदनां उदाहरण कहे छेः—

जिणसिद्धा अरिहंता, अजिणसिद्धाय
पुंमरिआ पमुहा ॥ गणहारि तिछसि
द्धा, अतिछसिद्धा य मरुदेवी ॥ ५६ ॥

अर्थः—(जिणसिद्धा के०) जिनसिद्ध ते ऋषभादिक (अरिहंता के०) अरिहंत भगवान् पोतें जाणवा. अने (अजिणसिद्धाय के०) अजिनसिद्ध ते (पुंमरिआपमुहा के०) पुंमरीक गणधर प्रमुख जाणवा. तीर्थंकरने केवलज्ञान उपना केडें चतुर्विध संघनी स्थापना कस्या पछी

जे सामान्यकेवली थईने मोक्षें गया. एवा (गण हारि के०) गणधारी एटले गणधर ते (तित्थसिद्धा के०) तीर्थसिद्ध जाणवा. केम के? गणधर प दवी तो तीर्थ स्थाप्या पछीज होय, माटें गण धर मुख्य कह्या. अने (अतित्थसिद्धा के०) अ तीर्थसिद्ध ते तीर्थ प्रवर्त्ताव्या पहेलां जे सिद्ध थया ते (मरुदेवी के०) मरुदेवी माता प्रमुख जाणवा. चकार छे, ते पादपूर्णार्थे छे ॥ ५६ ॥

गिहिलिंग सिद्ध भरहो, वक्कलची
रीय अन्न लिंगम्मि ॥ साहू सलिंग
सिद्धा, थीसिद्धा चंदणा पमुहा ॥५७॥

अर्थः– (गिहिलिंगसिद्ध के०) गृहस्थलिंग सिद्ध थया, ते (भरहो के०) भरत चक्रवर्त्ती प्रमुख जाणवा. (वक्कलचीरीय के०) वक्कलची रीय आदें लईने जे तापसना वेशें सिद्ध थया, ते (अन्नलिंगम्मि के०) अन्यलिंगें सिद्ध जा णवा. (साहू के०) साधुने वेशें जे सिद्ध थया,

ते (सलिंगसिद्धा के०) स्वलिंगसिद्ध जाणवा. जे (थीसिद्धा के०) स्त्रीलिंगें सिद्ध थया, ते (चंदणापमुहा के०) चंदनबाला प्रमुख जाणवी ॥ ५७ ॥

पुंसिद्धा गोयमाई, गांगेयपमुह
नपुंसया सिद्धा ॥ पत्तेय सयंबुद्धा,
जणिया करकंडु कविलाई ॥ ५८ ॥

अर्थः—(पुंसिद्धा के०) जे पुरुषलिंगें सिद्ध थया, ते (गोयमाई के०) गौतमादिक जाणवा. अने (गांगेयपमुह के०) गांगेयप्रमुख जे कृत्रिम नपुंसक थईने सिद्ध थया, ते (नपुंसया सिद्धा के०) नपुंसकलिंगें सिद्ध जाणवा. (पत्तेय के०) प्रत्येकबुद्ध सिद्ध जे (जणिया के०) कह्या छे, ते (करकंडु के०) करकंडू राजा आदें देइने जाणवा. तथा (सयंबुद्धा के०) स्वयंबुद्ध सिद्ध जे थया, ते (कविलाई के०) कपिल आदें देइने जाणी लेवा ॥ इति ॥ ५८ ॥

तह बुद्धबोहि गुरुबो, हिया इग स
मय इग सिद्धाय ॥ इग समए वि
अणेगा, सिद्धा ते णेगसिद्धाय ॥५९॥

अर्थः— (तह के०) तेमज (बुद्धबोहि के०) बुद्धबोधित सिद्ध ते (गुरुबोहिया के०) गुरुना उपदेशथी बोध पामीने जे मोक्षे गया, ते जाणवा. अने (इगसमय के०) एक समयने विषे माहावीर स्वामीनी परें जे एकज मोक्षे जाय, तेने (इगसिद्धाय के०) एकसिद्ध कहियें, (इगसमए विअणेगा के०) एक समयमां पण जे अने.. (सिद्धा के०) सिद्ध थया, एटले रुषभदेव स्वामीनी परें जे एक समयमां एकशो आठ मोक्षे जाय, (ते के०) ते (णेगसिद्धा य के०) अनेक सिद्ध कहियें ॥५९॥ इति मोक्षतत्त्व विचारःसमाप्तः॥९॥ इति श्रीबालावबोधसहितं नवतत्त्वप्रकरणं समाप्तम् ॥